CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्री माध्व गौड़ीय

* तत्व-दिग्दर्शनं *

लेखक—लाला कन्हैयालालात्मज भक्त भूषणोपाधिक
बाबू बांके बिहारीलाल उपनाम बांके पिया
संशोधक : आचार्य श्री बालकृष्ण गोस्वामी
एवं आचार्य श्री अनन्त लाल गोस्वामी

प्रकाशक—बाबू मुकुन्द बिहारी लाल
बी० ए० सी० एल-एल बी० वकील हाईकोर्ट

१००० प्रति | श्रीचैतन्याब्द ४४२ वि० सं० १९८४ | अमूल्य

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आम्नाय-ग्रन्थालय,
भरतनिधि, करौंदी
वाराणसी-5

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ग्रन्थालय, ... करौली

प्राक् कथन ।

साहित्य संसार में सरल और भाव भरे शब्दों से सुसज्जित कल्पना का आदर होता ही है।

किन्तु कभी २ भावावेश में भाषा भी अट पटी हो जाती है साहित्य-दोष से बचाकर अपनी कल्पना का चित्र ठीक चित्रित कर देना हर एक के बशकी बात नहीं, और साहित्य के सम्मान एवं सेवाके योग्य रचना भी सहज नहीं है बांकेपियाजीकी जोभी पुस्तकें अबतक प्रकाशित हुई हैं वह सब उनकी निजकी कल्पना है प्रत्येक पुस्तक में वृन्दावन बिहारी श्री गोपाल की बाँकी झाँकी अथवा उनके गुणगान कोही लेकर रचना की गई है।

आपकी अबतक गद्य एवं पद्य में जोभी ६—१० पुस्तकें निकली हैं वह साहित्य सेवा नहीं किन्तु प्रेमा की दृष्टि से लिखी हुई ज्ञात होती हैं, और प्रेमी की भाषा का प्रेमावेश में अटपटी होजाना आश्चर्य नहीं है अतः बाँकेपिया जी को इस पुस्तक की भाषा पर विशेष ध्यान न देकर स्वतन्त्र रचना और भावों पर ध्यानदेना आवश्यक है। इसमें ज्ञान. कर्म. उपासना. जगत्. जीव, ब्रह्म. एवं अवतार. लीला, काल. सम्प्रदाय. तर्क. प्रमाण अनुराग आदि सभी समयोपयोगी विषयों को चरचा की गई है।

दूसरे—तृणादपि सुनीचेन तरोरपि सहिष्णुना।
अमानना मान देन कोर्त्त नीयस्सदा हरिः

इस धर्म के सच्चे सिद्धान्त के अनुसार लेखक ने सज्जनों की सेवा ही के लिए यह "श्री माध्व गौड़ीय तत्व दिग्दर्शन" नाम की पुस्तक निजव्यय से प्रकाशित की है इसकी उपयोगिता अनुपयोगिता का विचार और लेखक के परिश्रम को सफल करने का भार पाठकों के ऊपर निर्भर है।

आचार्य अनन्त लाल गोस्वामी।

वृन्दावन।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विषय सूची ।

नं०	विषय	पृष्ठ	नं०	विषय	पृष्ठ
१	सांप्रदायिक तत्व रहस्य	१		स्वकीयापरकीया भावाः	७७
२	दीक्षा प्रकरण	१२		गोलोक व्याख्या	७८
	ग्राह्य शिष्य लक्षणं	१५		भक्तानां माहात्म्यं	८०
	त्याज्य शिष्य लक्षणं	१६	११	रस सिद्धान्त	८०
३	काल प्रकरण	१६	१२	ज्ञान प्रकरण	८४
	युग परिमाण	२०	१३	मुक्ति स्वरूप	८६
	समय परिमाण	२१	१४	वर्ण व्यवस्था	८७
४	प्रमाण प्रकरण	२२	१५	नाम रूप	८८
५	अवतार प्रकरण	२४	१६	शौच प्रकरण	८६
	स्वरूप	२४	१७	आचार तथा धर्मशास्त्र	६४
	श्री ब्रह्मा जी	२८	१८	वेद पुराण इतिहास	६६
	श्री रुद्र जी	२६	१६	शरणागत तथा सतसंग	६६
	लीलावतार	३१	२०	तर्क वितर्क	१०१
	मन्वन्तरावतार	४१	२१	संज्ञा प्रकरण	१०३
६	जीव प्रकरण	५६	२२	सिंहावलोकन	१०६
७	जगत् प्रकरण	६१	२३	श्री गौरांग अवतार	१११
८	कर्म्म प्रकरण	६५	२४	अनुराग सुमन	११८
६	उपासना प्रकरण	६८	२५	उद्बोधन	१३३
१०	भक्ति प्रकरण	७०	२६	अनुमति	१३४
	गोपी निगूढ़ प्रेम	७५			

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

❀ श्री श्री राधा रमणोजयति ❀

—— :❀: ——

श्री गौर चन्द्राय नमः

समर्पण

"यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वंच मयि पश्यति"

उक्त श्री भगवद्वाक्य को
शिरो धार्य कर
यह भेंट
भारत के भक्त वृन्दों की सेवा में
सादर समर्पण करता हूं।

विनति
बांके पिया

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

...ग्रन्थालय, भारतनिधि, करौंदा

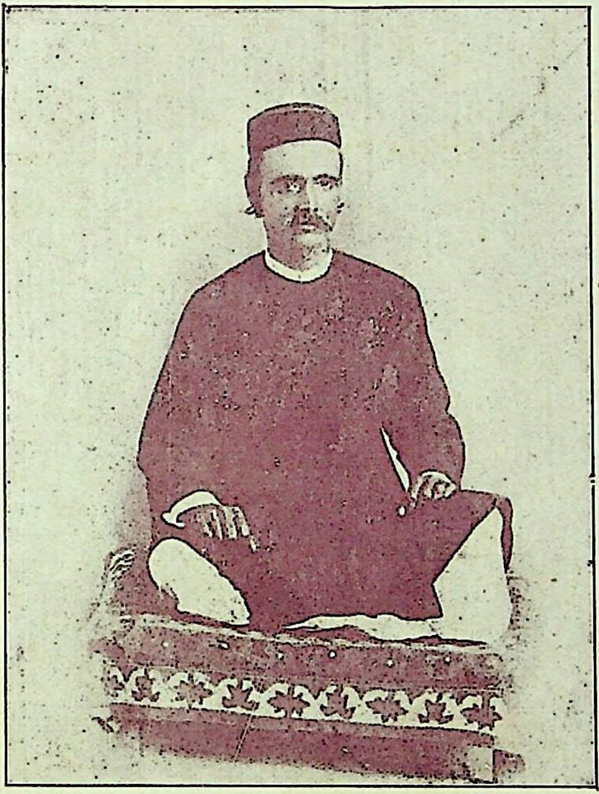

बांके बिहारी लाल उपनाम बांके पिया,
भक्त भूषण

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्री राधा रमणो जयति

* श्री गौरचन्द्रायनमः *

श्री माध्व गौड़ीय

तत्वादिग्दर्शन।

सांप्रदायिक तत्त्वरहस्य

श्लोक श्रीमन्मौक्तिक दाम वद्ध चिकुरं सुस्मेर चद्रानन श्रीखंडागरु चारु चित्र वसनं स्रग्दिव्य भूषान्वितं। नृत्यावेशर सानुमोद मधुरं कंदर्प्प वेषोज्वलं चैतन्यं कनक द्यु ति निजजनैः संसेव्य मानं भजे १॥

श्लोक—अंसालंवित वाम कुण्डलधरं मंदोन्नत भ्रूलतं किञ्चित्कुञ्चित कोमलाधर पुटं साचि प्रसा रेक्षणं। आलोलां गुलि पल्लवैर्मुरलिका मापूरयंतं मुदा मूले कल्प तरोस्त्रिभंग ललितं ध्याये जगन्मोहनं॥ २॥

तत्व विचार की दृष्टि से पांचही तत्व प्रतीत होते हैं ईश्वर, जीव, प्रकृति, काल और कर्म्म। इनमें ईश्वर और जीव ये दो चेतन पदार्थ हैं एवं प्रकृति काल और कर्म्म ये तीन अचेतन पदार्थ हैं। ईश्वर सब का पाता (पालन कर्त्ता) धाता (धारणकर्ता) विधाता (विधानकर्ता) है। इसी से वही परतत्व है। तत्व ज्ञानी गण उस परतत्व को तीन नामों

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

से पुकारते हैं । ब्रह्म, परमात्मा, भगवान्, परतत्व के[1] वाह्य ज्ञान से जो कुछ अनुभव होता है उसका नाम ब्रह्म है। वह परतत्व का प्रकाश मात्र है इसीसे वह निर्विशेष और निराकार है। परतत्व के आंशिक ज्ञान से जो दृष्ट होता है उस का नाम परमात्मा है. वह परतत्व का वह अंश है जो जीव और जड़ दोनों में अन्तर्यामि रूप से अवस्थित है और परतत्व के संपूर्ण एवं सविशेष ज्ञान से जो प्रत्यक्ष होते हैं उनका नाम भगवान् है वही भगवान् स्वयं[2] श्रीकृष्ण हैं ये अनादि सबके आदि समस्त कारणों के कारण एवं सच्चिदानन्द विग्रह हैं। ये अपनी अचिन्त्य शक्तिवल से चतुर्व्यूह (चाररूप होकर समस्त चराचर जगत गत एक रसवासुदेव, सृष्टि रचने के निमित्त संकर्षण, समष्टि जीव गत प्रद्युम्न एवं व्यष्टि जीव गत अनिरुद्ध इन चार नामों से संसार में प्रसिद्ध हैं इनकी अनन्त शक्तियों में से सर्व प्राधाना आल्हादिनी शक्ति स्वरूपा श्रीराधिका हैं इन आल्हादिनी शक्ति के आश्रय से श्रीकृष्ण चरणार्विन्दों की सन्निधि में उपस्थित होना ही जीवकी निश्चय सिद्धि है संसार मुक्ति जिस का एक आनुसंगिक फल है। जिस साधन से जीव श्रीकृष्ण सन्निधि में उपस्थित होता है उस साधन का नाम उपासना है। यह

---

(१) विदन्ति तत्तत्व विदस्तत्त्वंयज्ज्ञान मद्वयम् । ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानितिशब्द्यते ॥ भागवते

(२) एते चांशकला: पुंस: कृष्णस्तु भगवान् स्वयम् ॥ भागवते

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उपासना दो प्रकार की होती है एक गौणी दूसरी मुख्या जिस में अन्यान्य देवताओं के पूजन द्वारा श्रीभगवान् का अर्चन किया जाता है वह गौणी उपासना है और जिस में अनन्य भावसे साक्षात् श्रीभगवान् का आराधन किया जाता है वह मुख्या उपासना है इस मुख्या[1] उपासना का उपदेश जिस गुरु परंपरा द्वारा प्राप्त हुआ है उस का नाम संप्रदाय है इस उपासना के उपदेशक तथा इस संप्रदाय के प्रवर्तक स्वयं श्रीभगवान् हैं । समस्त चराचर जगत् में प्रविष्ट होने के कारण श्रीभगवान् का अपर एक नाम विष्णु भी है। इसी से इसे वैष्णव संप्रदाय भी कहते हैं। यह संप्रदाय संसार में चार मार्गों से प्रवर्तित है जोकि श्री, ब्रह्म, रुद्र एवं सनकादि के नामों से प्रसिद्ध हैं इनमें से यहाँ पर केवल ब्रह्म संप्रदाय का कुछ वर्णन करते हैं।

सृष्टि के आरम्भ में श्री भगवान् ने ब्रह्माजी को तत्वोपदेश दे कर उन के द्वारा संसार में तत्वपूर्ण वेदों का प्रकाश कराया-वही तत्व ब्रह्माजी ने नारद जी को और नारद जी ने व्यास जी को उपदेश किया व्यासजी ने वेदों का सार स्वरूप वेदान्त दर्शन रच कर उस तत्व को परम सुगम कर दिया किन्तु उसके अनन्तर अनेक समय तक उपयुक्त शिष्य के अभाव होने के कारण वह तत्व अंधों का हाथी बन गया भिन्न भिन्न लोगों ने उसे भिन्न भिन्न रूप से वर्णन करना आरंभ कर दिया-पर

(१) येऽप्यन्य देवता भक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विताः । तेऽपि मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधि पूर्वकम् ॥ श्री गीतायां ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तत्व के विषय में अनेक मत मतान्तर उत्पन्न होगये-ऐसे समय में सम्वत् ११८४ में दक्षिण भारत के उड़पी कृष्ण स्थान में तत्व-वाद गुरू श्री मध्वाचार्य (आनन्द तीर्थ) का आविर्भाव हुआ इन ने जीवों के कल्याण के निमित्त अत्यन्त श्रम स्वीकार करके हिमालय की कठिन यात्रा की और वहां स्वयं श्री व्यास जी से तत्वोपदेश ग्रहण कर वेदान्त सूत्रों का यथार्थ भाष्य प्रकाश किया। इसी समय से ब्रह्म संप्रदाय का नाम माध्व संप्रदाय प्रसिद्ध हुआ। श्री मध्वाचार्य से श्री पद्म नाभाचार्य ने तत्वोपदेश ग्रहण किया इन से श्री नरहरि आचार्यने इनसे श्री माधवाचार्यने इनसे श्री अक्षोभ्य मुनिने इन से श्री जयतीर्थने इनसे श्री ज्ञान सिन्धुने इनसे श्री दयानिधि ने इनसे श्री विद्या निधि ने इनसे श्री राजेन्द्र ने इनसे श्री जयधर्म ने इनसे श्री पुरुषोत्तम ने इनसे श्री ब्रह्मण्य ने इनसे श्री व्यास तीर्थ ने इनसे श्री लक्ष्मीपति ने इनसे श्री माधवेन्द्रपुरी ने इनसे श्री ईश्वरपुरी ने ग्रहण किया।

श्री ब्रह्मा जी से लेकर यहाँ तक की उपासना प्रणाली में श्री भगवान् के ऐश्वर्य भाव की ही प्रधानता अधिक थी-अब इससे आगे उस में कुछ विशेषता की आवश्यकता हुई तब विक्रम सम्बत् १५४२ की फाल्गुनी पूर्णिमा को गौड़ देश के नव द्वीप नगर में स्वयं श्री भगवान् ने श्री कृष्ण चैतन्य रूप से अवतीर्ण हो उसे माधुर्यभाव से परिपूर्ण कर जीव मात्रको उस के आस्वादन का अवसर अतिसुगम कर दिया भक्ति भाव अब

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रेम पीयूष से परिपूर्ण हो गया मृदु माखन में सुमधुर मिश्री का योग हो गया-इस सुघटना के अनन्तर से उक्तसंप्रदाय श्री माध्व गौड़ेश्व सम्प्रदाय के नाम से प्रसिद्ध हुई।

स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण चैतन्य रूप से श्री शची माताके गर्भ से अवतीर्ण भये सो इसके प्रमाण स्वरूप कुछ श्लोक नीचे उद्धृत किए जाते हैं :—

श्री नारद पुराणे श्री भगवद्वचनम्

अहमेव द्विज श्रेष्ठ ! नित्यं प्रच्छन्न विग्रहः। भगवद्भक्त रूपेण लोकान् रक्षामि सर्व्वदा॥ दिविजा भुविजायध्वं आयध्वं भक्त रूपिणम्। कलौसंकीर्त्तनारम्भे भविष्यामि शचीसुतः॥

गरुड़पुराणे – कलेःप्रथम सन्ध्यायां लक्ष्मीकान्तो भविष्यति। दारुब्रह्म समीपस्थः संन्यासी गौर विग्रहः॥ कलिनादह्यमानानां पवित्राय तनू भृताम्। जन्म प्रथम सन्ध्यायां करिष्यामि द्विजातिषु॥ योरेमेसह वल्लवी रमयते वृन्दावनेऽहर्निशम्। यः कंसं निजघानकौरवरणे यः पाण्डवानां सखा। सोऽयंवै नवदण्ड मण्डितभुजः संन्यास वेशः स्वयम्। निःसन्देहं समुपागतः क्षितितलेचैतन्य रूपः प्रभुः॥

स्कन्द पुराणे अन्तःकृष्णो वहिर्गौरः सांगोपांगास्त्र पार्षदः शचीगर्भे भविष्यामि माया मानुषकर्मकृत्॥

श्रीवामन पुराणे-कलि घोरतमश्छन्नान् सर्वानाचार वर्ज्जितान्। शचीगर्भे च सम्भूय तारयिष्यामि नारद !॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भविष्य पुराणे – आनन्दाश्रु कलारोमहर्षपूर्णं तपो धन ! । सर्वेमामेवद्रक्ष्यन्ति कलौ संन्यास रूपिणम् ॥

श्री विष्णुयामले कृष्ण चैतन्यनामानि कीर्तयन्तः स कृन्नराः । नानापराध युक्तास्ते पुनन्ति सकलंजगत् ॥ करिष्यामि कलेः सन्ध्यां भगवान् भूत भावनः द्विजातीनां कुलेजन्म शान्तानां पुरुषोत्तमः ॥

देवी पुराणे– स्वर्नदीतीर भूमौच नवद्वीपेजनालये । तत्र द्विज स्वरूपेण जनिष्यामि द्विजालये । भक्तियोग प्रकाशाय लोकस्या नुग्रहायच । संन्यासाश्रम माश्रित्य कृष्ण चैतन्यनाम धृक् ।

श्री ब्रह्म रहस्ये-कृष्णचैतन्येति नाम मुख्यान्मुख्यतमंप्रभोः । हेलया सकृदुच्चार्य्य सर्वनाम फलंलभेत् ॥

ऊर्धाम्नाये-अवतारमिदं कृत्वा जीव निस्तार हेतुना । कलौ मायापुरीं गत्वा भविष्यामि शची सुतः ॥

जैमिनिभारते- अन्यावतारा वहवः सर्वे साधारणामताः । कलौ कृष्णावतारस्तु गूढ़ संन्यास वेषधृक् ॥

चन्द्रामृते – अग्रगण्यं महा पुण्य मनन्यशरणं हरेः । अनुपासित चैतन्य मधन्यंमन्यते मतिः ॥

नृसिंह पुराणे—सत्ये दैत्यकुलाधिनाश समये सिंहोद्र्ध्व मर्त्याकृतिः । त्रेतायां दशकन्धरं परिभवन् रामेति नामाकृतिः । गोपालान् परिपालयन् व्रजपुरे भारंहरन् द्वापरे । गौरांगः प्रिय कीर्तनः कलियुगे चैतन्य नामा प्रभुः ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महाभारते सुवर्ण वर्णो हेमांगो वांग श्चन्दनांगदो। वोर हाविषमः शून्यो घृताशी रचलश्चलः इति

इस संप्रदाय को अनेक शाखायें इस समय श्री वृन्दावनादि में प्रचलित हैं जोकि परिवारों के नाम से परिचित हैं यथा श्री नित्यानन्द प्रभु परिवार, श्री अद्वैत प्रभु परिवार, षट् गोस्वामियों का परिवार, द्वादश गोपालों के परिवार चौंसठ महन्तों के परिवार-ये सभी श्रीकृष्ण चैतन्य महा प्रभु जी के चरणानुचर भक्त हैं, किन्तु इस (श्रीमाध्वगौड़ेश्वर) संप्रदाय के आचार्य पद पर श्री गोपाल भट्ट गोस्वामी जी ही अधिष्ठित हुए थे स्वयं श्रीमहाप्रभु जी ने इनको मंत्र दीक्षा देकर अपने विराजने की पीठ (गद्दी) इन्हें प्रदान की थी, श्री महाप्रभु जी की आज्ञा से ये श्री बृजधाम में आकर श्री वृन्दावन वास करने लगे-इनकी प्रेम भक्ति के वश हो स्वयं श्रीकृष्ण शालिग्राम से अर्चा विग्रह होकर श्री राधा रमण स्वरूप से अबतक विराज मान हैं श्री गोपाल भट्ट गोस्वामी जी ने अपने प्रिय शिष्य श्री गोपाल नाथ दास गोस्वामी जी को अपनी गद्दी एवं श्री राधा रमण जी की सेवा का अधिकार प्रदान किया श्री गोपी नाथ दास गोस्वामी जीने अपने लघु भ्राता श्री दामोदर दास गोस्वामी जी को शिष्य करके उनको आज्ञा दी कि तुम गृहस्थ धर्म अवलम्बन करो जिससे भविष्य में श्री राधा रमण जी की सेवा का कार्य्य तुम्हारे वंशजों द्वारा सुचारु रूप से चलता रहे श्री दामोदर दास गोस्वामी जीने अपने गुरुदेव की आज्ञानुसार

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दार परिग्रह किया इनके तीन पुत्र हुए-श्री हरिनाथ गोस्वामी श्री मथुरादास गोस्वामी और श्री हरिराम गोस्वामी-इन्हीं तीनों गोस्वामीयों के वंशज वर्तमान में श्री माध्व गौड़ेश्वर संप्रदाय के आचार्य पद पर प्रतिष्ठित एवं श्री राधा रमण जी की सेवा के अधिकारी हैं

इससम्प्रदायका सिद्धान्त संक्षेप से निम्नालखित दो श्लोकों में वर्णित है श्लोक-श्री मध्वःप्राह विष्णुं परं तम मखिलाम्नाय वेद्यन्च विश्वं भेदं सत्यं च जीवान्हरिचरण जुषस्तार तम्यंच तेषाम् । मोक्षं विष्ण्वंघ्रिलाभं तदमल भजनं तस्य हेतु प्रमाणम् प्रत्यक्षादि त्रयं चेत्युपदिशति हरि कृष्ण चैतन्य चन्द्रः ॥

अर्थात् श्री कृष्णा चैतन्य महाप्रभु उपदेश करते हैं कि श्री मध्वाचार्य के मत में एक मात्र श्री भगवान् विष्णु ही समस्त वेदैक वेद्य एवं परम तत्व हैं-जगत् एवं उसका श्री भगवान के साथ भेद सत्य है जीव सबभगवान के दास हैं और उनमें तारतम्य है-श्री भगवान् के चरणारविन्दों की प्राप्ति ही मोक्ष है और श्री भगवान् का अमल भजन ही मोक्ष प्राप्ति का साधन है प्रत्यक्ष अनुमान एवं शब्द यही तीन प्रमाण हैं ॥ १॥

श्लोक-आराध्यो भगवान् व्रजेश तनयस्तद्धाम बृन्दावनम् । रम्या काचिदुपासना व्रजवधू वर्गेणया कल्पिता श्री मद्भागवतं प्रमाण ममलं प्रेमा पुमर्थोमहान् । श्री चैतन्य महाप्रभोर्मत मिदं तत्रा ग्रहोना परः ॥ अर्थात् श्रीकृष्ण चैतन्य महा प्रभु के मत में श्रीबृन्दावन विहारी व्रजेन्द्र नन्दन श्री कृष्ण ही परम आराध्य हैं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वृजगोपियों की उपासना प्रणाली ही जिनकी आराधना का अति रम्य एवं सुगम मार्ग है-श्री मद्भागवत इसमें अमल प्रमाण है प्रेम ही जीवका परम पुरुषार्थ है-यही सिद्धान्त सबको स्वीकार करना चाहिये-इससे भिन्न नहीं मानना चाहिये ॥

श्री मन्मध्वाचार्य द्वारा लिखितग्रंथाः : –

(१) ब्रह्मसूत्र भाष्य
(२) ऋग्वेद भाष्य
(३) ऋग्भाष्य टीका
(४) तत्व विवेक
(५) मायावाद खण्डन
(६) श्रीभा वत् तात्प र्य
(७) श्रीभारत तात्पर्य
(८) श्री ीता तात्पर्य
(९) श्री ीता भाष्य
(१०) दशोपनिषद् खण्डार्थ इ०

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु के शिष्यों द्वारा रचित ग्रन्थावली—

सं	नाम ग्रन्थ	नाम रचयिता
१	षट् सन्दर्भ	श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी
२	श्रीहरिभक्ति विलास	,,
३	श्री गोविन्द भाष्य	श्रीबलदेव विद्याभूषण (श्री
४	वेदान्तस्यमन्तक	वैष्णवानन्दिनी टीका श्री
५	भाष्य पीठक	मद्भागवत पर)
६	सिद्धान्त दर्पण	,,
७	प्रेम रत्नावली	,,
८	उपनिषद्भाष्य (ईशावास्य)	,,
९	बेदान्तसूत्र वृत्ति	श्रीराधारमण गोस्वामी
१०	दीपिकादीपन	,,
११	श्रीगोपाल तापनीय भाष्य	श्रीमद्विश्वनाथ चक्रवर्त्ति
१२	श्रीकृष्णभावनामृत	,,
१३	सारार्थ दर्शिनी	,,
१४	सदाचार चन्द्रिका	,,
१५	रसामृतशेष	श्रीप्रबोधानन्द सरस्वती
१६	श्रीराधासुधानिधि	,,
१७	श्रीवृन्दावनशतकादि १००	,,
१८	श्री चैतन्यचन्द्रामृत	,,
१९	श्रीलघुगोपालतापनीयभाष्य	श्रीजीवगोस्वामी
२०	श्री गायत्री भाष्य	,,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सं	नाम ग्रन्थ	नाम रचयिता
२१	श्रीमद्भागवत् दीपिका	श्रीजीवगोस्वामी
२२	लघुतोषिणी	,,
२३	बृहत् क्रम संदर्भ	,,
२४	श्रीहरिनामामृत	,,
२५	श्रीगोपाल चम्पू	,,
२६	संकल्प कल्पद्रुम	,,
२७	वृहत्तोषिणी	श्रीसनातन गोस्वामी
२८	वृहद्भागवतामृत	,,
२९	लघुभागवतामृतम्	श्रीरूपगोस्वामी
३०	उज्वलनील मणि	,,
३१	भक्तिरसामृत सिंधु	,,
३२	ललित माधव	,,
३३	विदग्धमाधव(नाटकचंद्रिका)	,,
३४	दानकेलि कौमुदी	,,
३५	श्रीगीतगोविन्द	श्रीजयदेव कविराज
३६	श्रीजगन्नाथ वल्लभ	श्रीरामानन्द राय
३७	श्रीकृष्ण कर्णामृत	श्रीविल्व मंगल जी
३८	श्रीचैतन्य चरित	कविकर्णपूर
३९	आनन्द वृन्दावनचम्पू	,,
४०	अलंकार कौस्तुभ	,,
४१	श्रीचैतन्य चन्द्रोदय	,,
४०	श्री गोविन्द लीलामृत	श्रीकृष्णदास कविराज

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अथ दीक्षा प्रकरण

श्लोक– बन्दे गुरूनीश भक्तानीश मीशावतारकान् । तत् प्रकाशाँश्चतच्छक्तीः कृष्ण चैतन्य संज्ञकम् ॥ १ ।

श्रीभागवते—आचार्य्यस्माम्बिजानीयान्नाव मन्येत कर्हिचित् । नमर्त्यं बुद्ध्या सूयेत सर्वदेवमयोगुरुः ॥ २ ॥

श्रीशिवोपार्वतींप्रति-पाद्मे– अदीक्षितस्य वामोरू कृतं सर्वं निरर्थकम् । पशुयोनिमवाप्नोति दीक्षा विरहितोजनः ।।

अर्थ जिसने दीक्षा नहीं ली है उसके किये सब कर्म निष्फल होते हैं और उसको पशु योनि प्राप्त होती है

अथ गुरु लक्षणम् पाद्मे– महाभागवतः श्रेष्ठो ब्राह्मणो वै गुरुर्नृणाम् । सर्वेषामेवलोका ना मेषपूज्यो यथा हरिः ।

अर्थ - महाभागवतःश्रेष्ठ अर्थात् श्रीभगवत् तत्व, जीव तत्व भक्तितत्व प्रभृतिसर्व तत्वों का वेत्ता ब्राह्मण ही मनुष्यों का गुरु है और ऐसे भागवत् ब्राह्मण का श्री भगवान् के समान पूजा और समादर करना चाहिये ।

विजयो पण्डित काश्मीरोय श्री केशवाचर्य्येण क्रमदीपिका ग्रन्थे विप्रंप्रध्वस्त काम प्रभृति रिपु घटं निर्मलांगं गरिष्ठां भक्तिं कृष्णांघ्रिपङ्करुह युगल रजो रागिणी मुद्वहन्तम् वेत्तारं वेद शास्त्रागमविमलपथां सम्मतं सत्सुदान्तम् विद्याम् यस्सम् विवित्सुः प्रवणतनु मनादेशकं संश्रयेत ।

अर्थ - जो जन तत्वज्ञान प्राप्त करने की इच्छा करता है । वह विनीत तनु मन होकर काम क्रोधादि रिपु घटा को ध्वस्त

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करने वाले, निर्मलांग, श्रीकृष्ण चरण कमल रजोराग बाहिनी गरिष्ठाभक्ति धारी, निगमागम शास्त्र पथाभिज्ञ और सत्पुरुषों में माननीय समस्त इन्द्रिय दमन शील ब्राह्मण को गुरू रूपसे आश्रय करै।

विष्णु स्मृति तथा हरिभक्त विलासे— परिचर्य्या यशोलाभ लिप्सु : शिष्याद्गुरुर्नहि । कृपासिन्धुस्सु सम्पूर्णस्सर्व सत्वो पकारकः ॥ १ ॥ निस्पृहः सर्व तस्सिद्धः सर्वं विद्याविशारदः । सर्वसंशय संच्छेत्ता ना लसो गुरु राहृतः ॥ २ ॥

अर्थ शिष्य से परिचर्य्या यश और लाभ की जिसे लिप्सा हो वह गुरू नहीं है— गुरू कृपासिन्धु हो, सम्पूर्ण हो सर्व सत्वों का उपकारक हो, निस्पृह सर्व सिद्ध और सर्व विद्या विशारद हो, समस्त संशयों का छेदन करने वाला और आलस्य रहित हो -

श्री हरिभक्ति विलासोद्धृत तत्वसागरे- बह्वाशी दीर्घसूत्री च विषयादिषु लोलुपः । हेतुवाद रतो दुष्टो वाग्वादी गुरु निन्दकः ।१॥ अरोमा बहु रोमा च निन्दिताश्रम सेवकः । कालदन्तोऽसितोष्ठश्च दुर्गन्ध श्वास वाहकः ॥ २ ॥ दुष्ट लक्षण सम्पन्नो यद्यपि स्वयमीश्वरः। बहुप्रतिग्रहासक्त आचार्य्यः श्रीक्षयावहः॥३॥

अर्थ—बहुत भोजन करने वाला, दीर्घ सूत्री, विषय लोलुप हेतु वाद रत अर्थात् जिन मतोंमें हेतुवाद*हो उनका मानने वाला

* जैमिनिःसुगतश्चैव नास्तिक नग्न एवच । कपिलश्चाक्ष पादश्च षडेते हेतुवादिनः ॥ अर्थ—जैमिनी कर्म को प्रधान और जगत् को नित्य स्वतः सिद्ध मानने वाला, बौद्ध मत का मानने वाला, नास्तिक, जो

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दुष्ट, अवाग्वादी अर्थात् दूसरों के पापों को सूचन करने वाला, गुणों की निन्दा करने वाला जिस के शरीर में रोम न हों, जिसके बहुत रोम हों, निन्दित आश्रम † की सेवा करने वाला, काले दांत वाला, काले होंठ वाला दुर्गन्धी श्वास वाला, ऐसे दुष्ट गुणों वाले पुरुष को गुरू नहीं करना चाहिए चाहे वह दानके पुण्या-दिकों में समर्थ भी हो तब भी उसको गुरू न करै और जो गुरू बहुत भेंट लेने की इच्छा रखता हो वह भी शिष्य की लक्ष्मी नाश करने वाला गुरू वर्जित है।

पाद्मे—महाकुल प्रसूतोपि सर्वं यज्ञेषु दीक्षितः। सहस्र शाखाध्यायी च न (१) गुरुश्चेद वैष्णवः॥

अर्थ—बड़े उत्तम कुलमें भी उत्पन्न हुआ हो और सब यज्ञों में दीक्षित हो और वेद की हजार शाखाएँ पढ़ा हो किन्तु यदि अवैष्णव होतो उसको कभी गुरू रूपसे वरण न करना चाहिए।

परलोकमें विश्वास न करता होनञ, कापिल अर्थात् निरीश्वर सांख्य मत अक्षपाद कणाद मुनि का न्याय शास्त्र, ये छै (६) हेतु वादमत हैं और इन छै मतों का मानने वाले हेतु वादी कहाते हैं—

†गृहस्थस्य क्रिया त्यागो व्रत त्यागो वटोरपि। तपस्विनो ग्राम सेवा भिक्षो रिन्द्रीय लौल्य ता। आश्रमाप सदा ह्येते खल्वाश्रम विडम्बका॥ अर्थ—गृहस्थाश्रम में रह कर कर्म छोड़ देना, ब्रह्मचर्य्य में व्रत छोड़ना तपस्वी होकर ग्राम में रहना, सन्यासी होकर इन्द्रिय चांचल्य के बश में होना यही निन्दित आश्रम हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्लोक – अवैष्णवोपदिष्टेन मन्त्रेण निरयं व्रजेत्।
पुनश्च विधिवत्तस्मात् गृहीया द्वैष्णवाद्गुरोः॥

अर्थ अवैष्णवगुरू से यदि मंत्रोपदेश लिया हो तो नर्क में पड़ना होगा इसी से उस मंत्र को त्याग कर फिर वैष्णव गुरू से यथा विधि मंत्रोपदेश ग्रहण करै।

वैष्णव धर्म – विष्णु का भाव रखना अर्थात् विष्णु का मानना।

विष्णु - जो जगत् को सृष्टि, स्थिति और प्रलय करता है और जगत् में अन्तर्य्यामी रूप से प्रवेश कर नियमन करता है उसी सर्व व्यापक परतत्व को विष्णु कहते हैं।

अथ ग्राह्य शिष्यं लक्षणं

श्रीहरि भक्ति विलासोद्धृत मंत्र मुक्तावल्यां शिष्यः शुद्धान्वयः श्रीमान् विनीतः प्रियदर्शनः। सत्यवाक् पुण्य चरितोऽदभ्रधीर्दम्भ वर्जितः॥ काम क्रोध परित्यागी भक्तश्चगुरुपादयोः। देवता प्रवणः काय मनोवाग्भिर्दिवानिशम्॥ नीरुजोनिर्जिताशेष पातकः श्रद्धयान्वितः। द्विजदेव पितॄणाञ्च नित्य मर्चापरायणः॥ युवा विनियता शेष करणः करुणालयः। इत्यादि लक्षणैर्युक्तः शिष्यो दीक्षाधि कारवान्॥

अर्थ—शुद्ध वंश, श्रीमान्, विनीत (नम्र), प्रिय दर्शन, सत्यवाक्, पुण्य चरित, अदभ्रधी (बुद्धिमान्), दम्भ रहित, काम क्रोध

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

त्यागी, गुरुचरणोंका भक्त, शरीर, मन, वाणीसे दिनरात देवता में तत्पर हो, रोग रहित हो पातक उपपातकों में से कोई जिसने न किया हो. श्रद्धायुक्त हो ब्राह्मण, देवता और पितरों की नित्य पूजा करता हो, युवा और समस्त इन्द्रियों को जिसने जीत लिया हो और कृपालु हो ऐसे लक्षणों से युक्त शिष्य दीक्षा का अधिकारी है—

अथ त्याज्य शिष्य लक्षणं ।

श्लोक अलसा मलिना क्लिष्टा दाम्भिका कृपणास्तथा । दरिद्रारोगिणो रुष्टा रागिणो भोग लालसाः ॥ असूया मत्सरग्रस्ता-स्सठा परुषवादिनः । अन्यायोपार्जित धनाः परदाररताश्चये । विदुषां वैरिणश्चैव अज्ञाः पण्डित मानिनः । भ्रष्टव्रताश्चये कष्ट वृत्तयोपिशुनाखलाः वह्वाशिनः क्रूरचेष्टाः दुरात्मानश्चनिन्दिताः इत्येव मादयो व्यन्ये पापिष्टाः पुरुषाधमाः ॥ अकृत्येभ्योऽविवा र्याश्च गुरुशिक्षा सहिश्नवः । एवं भूताः परित्याज्याः शिष्यत्वे नोप कल्पिताः ।

अर्थ—आलसी मलिन, क्लेशयुक्त दाम्भिक (डिम्बधारी), कृपण, दरिद्री, रोगी, हिंसक रागी (वैराग्य शून्य) जिसको सदा भोग की ही लालसा रहै, असूया और मत्सरसे ग्रसित, शठ, परुष वादी (कटुवचन बोलनेवाला), जिसने अन्याय से धन उपार्जन किया हो, जो पर स्त्री में प्रीति करता हो, जो पण्डित से वैर रखता हो. अज्ञ हो और अपने को पण्डित मानता हो. जिसका व्रत भ्रष्ट होगया हो, जिसकी जीविका कष्ट से चलती हो,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भारतनिधि, काशी वाराणसी-5

पिशुन (दूसरों के दोषों की सूचना किया करता हो) खल (दूसरों को दुख देता हो) बहुत भोजन करता हो, जिसकी चेष्टा भयंकर हो, दुष्टात्मा, निन्दित, बहुतवार समझाने से बुरे काम न छोड़ता हो, गुरु की शिक्षा को न सह सकता हो ऐसे पापी और अधम पुरुषों को शिष्य कभी न करना चाहिए

श्लोक - राज्ञिचामात्यजादोषाः पत्नीपापं स्वभर्तरि । तथा शिष्यार्जितं पापं गुरुः प्राप्नोत्य संशयम् ।

अर्थ—प्रजा के दोष राजा को और पत्नी का पाप पति को जिस प्रकार प्राप्त होता है वैसे ही शिष्य के किये पाप को गुरू प्राप्त होता है ।

श्लोक—गुरु शय्यासनम् यानम् पादुके पाद पीठकम् । स्नानोदकम् तथा छायाम् लंघयेन्न कदाचन ॥ गुरोरग्रे पृथक् पूजा मद्वैतंच परित्यजेत । दीक्षाम् व्याख्याम् प्रभुत्वंच गुरोरग्रे विवर्जयेत् ॥ न तमाज्ञापयेन्मोहात् तस्याज्ञाम् नच लंघयेत् । नानिवेद्य गुरोः किंचित् भोक्तव्यम् वा गुरोस्तथा ॥ न गुरोर-प्रियं कुर्यात् ताड़ितः पीड़ितोपिवा । नावमन्येत तद्वाक्यम् नाप्रियम् हि समाचरेत् ॥

अर्थ—गुरू की शय्या, आसन, यान (सवारी), पादुका (खड़ाऊँ), पाद पीठ, स्नान का जल और गुरू की छाया कभी उलघंन न करै, गुरू के आगे पृथक् पूजा न करै, गुरू और हम एक से ही हैं ऐसा भाव कभी न करै, गुरू के आगे किसी को दीक्षा न दे, व्याख्यान न करै, अपनी प्रभुता न करै, कभी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मोह से भी गुरू पर आप आज्ञा न करै, गुरुकी आज्ञा न टारै गुरू के निवेदन किये विना कुछ भोजन न करै और गूरू का द्रव्य लेकर आप भोग न करै, गुरू ताड़ना करै चाहै पीड़ा दे तब भी उनका अप्रिय न करै, गुरू के वाक्य का अपमान न करै, और जो काम गुरू को अप्रिय हो वह न करै—

श्लोक—श्रेयस्तु गुरुवत् वृत्ति नित्य मेवसमा चरेत्। गुरुपुत्रेषु दारेषु गुरो श्चैव स्वबन्धुषु॥

अर्थ - उत्तम पुरुष को चाहिये कि गुरु पत्नी, गुरु पुत्र और गुरू के निज बन्धुओं में गुरू के समान भक्ति और बर्ताव करै—

श्लोक—कृष्ण मन्त्रोपदेशेन माया दूर मुपागता। कृपया गुरु देवस्य द्वितीयं जन्म कथ्यते॥

अर्थ—श्रीकृष्ण नाम मंत्र के उपदेश से माया छूट जाती है और श्रीगुरुदेव की कृपा से दूसरा जन्म होजाता है अर्थात् गुरु दीक्षा लेते ही दूसरा जन्म होजाता है और पूर्वकृत समस्त पाप भस्म होजाते हैं—

श्लोक—गुरोरवज्ञया मृत्युःमंत्र त्यागाद्दरिद्रता। गुरु मंत्र परित्यागी सिद्धोऽपिनरकं व्रजेत्॥

अर्थ—गुरू की अवज्ञा से मृत्यु, मन्त्र त्याग से दरिद्रता होती है, गुरु मंत्र त्यागी सिद्ध भी नरक को जाता है—

श्लोक—आचारो धर्म मार्गश्च गुरुमंत्रश्च देवता। दंपत्य पत्य भृत्याद्यै रेकी कृत्य महत्फलम्॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्थ—स्त्री, पुरुष, पुत्र, नौकर ये सब मिलके एक सदाचार, एक धर्म एक गुरु, एकही मंत्र और एकही देवता का आश्रय करें तो वड़ा फल होता है—

इति

अथ काल प्रकरण

श्लोक—आमुक्ता भरणं घनाभ हरणं वेणुंनिधाया धरे कुर्वाणं विवशं मनो नवरसं गोपालगोपीगवां। पादाग्रे चरणं निधाय शरणे कांत्या त्रिभंग्या युतं श्री राधारमणं भवाब्धि तरणं चेतः सरोजे भजे॥

भूत, भविष्य और वर्तमान तीन प्रकार का काल अनादि असंख्य है इस की संख्या नहीं होसक्ती किन्तु आवश्यकतानुसार ज्ञानार्थ जो कुछ मुनिगणों ने कहा है इस प्रकार है—सत्य, त्रेता द्वापर, और कलि इन चार युगों को दिव्य युग कहते हैं सहस्र चतुर्युगका एक कल्प होता है—प्रत्येक कल्प में १४ मन्वन्तर होते हैं--श्री ब्रह्मा जी के एक दिन का एक कल्प होता है-कल्पान्तर में जो प्रलय होत है उसको ब्रह्मा की रात्रि कहते हैं—इस ही का नाम प्रतिदिन को प्रलय है—इस प्रकार ३० कल्प मेंब्रह्मा जी का एक मास होता है—१२ मास का एक वर्ष और दिव्य ५० वर्ष का एक परार्द्ध इस प्रकार ब्रह्मा जी की आयु दो परार्द्ध की होती है दो परार्द्ध काल जब व्यतीत होजाता है तब प्राकृतिक प्रलय होकर ब्रह्मा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जी को परम पद की प्राप्ति होती है—उस समय समस्त प्रपंच प्रकृति में लीन हो जाता है वे ३० कल्प यह हैं: —

(१) श्वेत वाराह, २) नील लोहित (३) वामदेव, (४) गाथान्तर, (५) रौरव, (६ प्राण, (७ बृहत्, (८) कन्दर्प, (९) सव्य, (१०) ईशान, (११) ध्यान, (१२ सारस्वत, (१३) उदान, (१४) गरुड़, (१५) कौर्म १, (१६) नारसिंह (१७) समाधि, (१८ आग्नेय. (१९) विष्णुज (२०) वंश (२१ सोमवंश, (२२) भावन. (२३) बैकुण्ठ, (२४) अार्च्चिष, (२५) वल्ली कल्प, (२६) रथन्तर. (२७) वैराज, (२८) गौरी, (२९) माहेश्वर, (३०) पितृ कल्प २।

प्राथमिक श्वेत वाराह कल्प में ब्रह्मा जी का जन्म हुआ इसी कारण इस को ब्रह्म कल्प भी कहते हैं—इस प्रकार प्रथम परार्द्ध के अवसान में श्रीभगवान् के नाभि सरोवर से एक लोकात्मक पद्म उत्पन्न हुआ इस कारण पितृ कल्प नाम हुआ- श्री ब्रह्मा जी की आयु का प्रथम परार्द्ध बीतगया आज कल दूसरे परार्द्ध का श्वेत वाराह कल्प वर्तमान है--

(१) युग परिमाण इस प्रकार से है।

सत्ययुग १७२८००० वर्ष (मनुष्य)

त्रेतायुग १२९६००० वर्ष ,,

द्वापरयुग ८६४०० ० वर्ष ,,

कलियुग ४३२००० वर्ष ,,

---

१ इस को ही ब्रह्मा जी की पूर्ण मासी कहते हैं।

२ इस को ब्रह्मा जी की अमावस्या कहते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(२) समय परिमाणम्

२ परमाणु = १ अणु

३ अणु = १ त्रसरेणु*

१० त्रुटि = १ वेध

३ वेध = १ लव

३ लव = १ निमेष

३ निमेष = १ क्षण

५ क्षण = १ काष्टा

१५ कष्टा = १ लघु

१५ लघु = १ घड़ी (घटिका) †

२ घड़ी = १ मुहूर्त्त

३० मुहूर्त्त ६० घड़ी (२४ घंटे) वा ८ पहर=अहोरात्रि

---

* सूर्य्य की किरण जो झिरी में से होकर आती है उस में के बहुत से रजकणों में से सबसे छोटा कण अति हलका होने से भूमिपर नहीं गिरता ऐसे ३ त्रसरेणु के समान स्थान उल्लंघन करने में सूर्य को जितना काल लगता है उसको त्रुटि कहते हैं—

† ५ गुन्जा=१ मासा; १६ मासा=१ कर्ष (तोला), ४ कर्ष=१ पल (छटांक) १६ पल=१ प्रस्थ (सेर) इसप्रकार ६ पल तांबे का एक पात्र एक सेर जल आने योग्य बनवाकर उसके मध्य भाग में ४ मासे सुवर्ण की ४ अंगुल लम्बी बनी हुई शलाका से छिद्र करे वह छिद्र ऐसा हो जिसमें से वह शलाका निकल सके तिस छिद्र द्वारा से भर पानी पात्र में भर जाने पर वह पात्र डूब जाता है तो जितने समय में वह पात्र पानी से भर कर डूब जावै उतने समय को एक घडी वा घटिका कहते हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(दिनरात)

१५ अहोरात्र= १ पक्ष

२ पक्ष कृष्ण शुक्ल)=१ मास (पित्रों का १ दिनरात्रि)

२ मास = १ ऋतु

६ मास = १ अयन (दक्षिणायन, उत्तरायण) देवताओं के १ दिन रात्रि।

१२ मास, वा दो अयन वा ६ ऋतु * = १ वर्ष (सम्बत सर)

१०० वर्ष = मनुष्य की परमायु (कलियुग में)

पंच प्रकार के सम्वत् सर होते हैं अर्थात् १ सम्वत्सर, २ परिवत्सर, ३ इडावत्सर, ४ अनुवत्सर, ५ वत्सर प्रत्येक मन्वन्तरों में मंनु, देवता, मनुपुत्र, इन्द्र, सप्तऋषि और हरि का अंशावतार यह छै हुआ करते हैं प्रत्येय मन्वन्तर में ७१ वेर चारों युग व्यतीत होते हैं अर्थात ३११४८८०० वर्ष का एक मन्वन्तर होता है वे १४ मन्वन्तर यह हैं-स्वायम्भुवीय, चाक्षुषीय, वैवस्वतीय, स्वारोच्षिषीय, औत्तमीय, तामसीय, रैवतीय, सावर्णीय, दक्ष सावर्णीय, ब्रह्मसावर्णीय, धर्मसावर्णीय, रुद्र सावर्णीय, देवसावर्णीय, इन्द्रसावर्णीय।

अथ प्रमाण प्रकरण।

श्लोक—अग्निर्मही गगन मंबु मरुद्दिशश्च काल स्तथा-त्म मनसीति जगत्त्रयाणि। यस्मा द्भवंति न भवंति बिशंति यंच गोविन्द मादि पुरुषं तमहं भजामि॥

* बसंत, ग्रीष्म, वर्षा (बरसात), शरद, हेमन्त, शिशिर।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitization by eGangotri

आचार्य-ग्रन्थागार, भरतनिधि, करौंदी वाराणसी-5

प्रमाण[1] आठ प्रकार के हैं प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द, उपमान अर्थापत्ति, अनुपलब्धी, ऐतिह्य और सम्भव इनमें प्रथम तीन ही मुख्य हैं किन्तु श्री व्यास जी ने वेदान्त दर्शन के "शास्त्र योनित्वात्" इस सूत्र में शब्द प्रमाण को ही सर्वश्रेठ स्वीकार किया है अन्यान्य प्रमाणों में दोष होना संभवहै-शब्द प्रमाण आप्त (यथार्थ बक्ता) का वाक्य होने के कारण निर्दोष होता है-किसी भी मनुष्य के वाक्य अलौकिक अचिन्त्य बस्तु के विषय में प्रमाण नहीं हो सक्ते क्योंकि ये भ्रम, प्रमाद, विप्रलिप्सा (वंचनेच्छा) और करणापाटव (अनवधानता) इन चार प्रकार के दोषों से युक्त होते हैं वास्तव में एक मात्र ईश्वर ही सर्वज्ञ होने के कारण आप्त हैं-परमार्थ विषय में उन्हीं के वाक्य वेद शब्द प्रमाण रूप से ग्रहण किये जासकते हैं-वेदानुकूल जो ऋषि वाक्य स्मृति पुराणादि हैं वे भी स्वीकार किये जासकते हैं-मनुष्यों के प्रत्यक्ष और अनुमान भी सदोष हैं जैसे भोज विद्या (वाजीगरी) के खेल में मनुष्य के कटे हुए शिर को सच्चा मानलेते हैं और तात्कालिक वर्षा से बुझी हुई अग्नि से उठते हुए धूम्र को देख कर अग्नि का अनुमान कर लेते हैं इसी लिये स्वतःप्रमाण नहीं होसकते-श्री व्यास जीने भी "तर्का प्रतिष्ठानात्" इस सूत्र में शास्त्र रहित अर्थात् प्रत्यक्ष और अनुमान का निरादर किया है॥ जगत के सभी पदार्थ शब्दप्रमाण के अन्तरगत हैं जैसे कोई

(१) ज्ञान का यथार्थ साधन।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पूंछे कि अमुक अमुक वस्तु के अमुक २ नाम क्यों हैं तो उत्तर मिलैगा कि पूर्बजों से श्रवण किये गये हैं अतएव शब्द प्रमाण ही मुख्य है—इति—

अथ अवतार प्रकरण।

श्लो – चिंतामणि प्रकर सद्मसुकल्प वृक्ष लक्षावृतेषु सुरभी रभिपालयंतं लक्ष्मी सहस्र शत संभ्रम सेव्यमानं गोविन्द मादि पुरुषं तमहं भजामि।

स्वरूप।

उपास्य बंग में उत्कर्ष वाहुल्यता अर्थात् शक्ति, गुण विभूति और लीला के बश श्रीकृष्ण जी प्रपंच से परे गोलोक धाम में स्वयंरूप, तदेकात्म रूप और आवेश इन तीन रूपों से विलास करते हैं –

(१) स्वयंरूपः—

अनन्यापेक्षियद्रूपं स्वयं रूपःसउच्यते —

अर्थ—किसी की अपेक्षा करके जिसका रूप प्रकट नहीं हुआ उस को स्वयं रूप कहते हैं यथा ब्रह्मसंहितायाम् (५–२)-

श्लोक—ईश्वरःपरमःकृष्णःसच्चिदानन्द विग्रहः। अनादिरादि गोविन्दःसर्व कारण कारणम्॥

अर्थ श्रीकृष्ण ही परम ईश्वर हैं जिनका विग्रह सच्चिदानन्द मय है, अनादि हैं, सबके आदि हैं सुरभि (गो) वृन्द के परिपालक हैं और समस्त कारणों के कारण हैं—

(२) तदेकात्म रूपः—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यद्रूपं तद भेदेन स्वरूपेण विराजते ॥

अर्थ जिसका स्वरूप स्वयंरूप के समान होने पर भी आकारादि द्वारा अन्य प्रकार का होकर प्रकाशित होता है उसको तदेकात्म रूप कहते हैं—यह विलास और स्वांश भेद से दो प्रकार का है—

विलासः—

स्वरूप मन्याकारं यत्तस्य भाति विलासतः ॥

अर्थ—स्वयं रूप जो लीला विशेष के लिये अन्य प्रकार का प्रतिभात होता हो और शक्ति प्रकाश में प्रायः उसी के समान हो उसको विलास कहते हैं ॥

स्वांशः—

तादृशोन्यून शक्तिं यो व्यनक्ति स्वांश ईरितः ॥

अर्थ—जो विलास सदृश अर्थात् स्वयं रूप से अभिन्न होकर विलास को अपेक्षा थोड़ी शक्ति प्रकाश करते हैं उनको स्वांश कहते हैं ॥

(३) आवेशः—

ज्ञान शक्त्यादि कलया यत्राविष्टो जनार्दनः । त आवेशानिगद्यन्ते जीवा एव महत्तमाः ॥

अर्थ—ज्ञानशक्तियादि के विभाग कर के नारायण जो जिन अधिक महान् जीवों में आविष्ट हुआ करते हैं उनको आवेश कहते हैं सो आवेश भी न्यूनाधिक ईश्वरत्वाभिमान से दो प्रकार का है एक प्रकाश और द्वितीय अवतार—

(१) प्रकाश—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्लोक--अनेकत्र प्रकटता रूपस्यैकस्ययैकदा । सर्वथा तत्स्वरूपैव सप्रकाश इतीर्यते ॥

अर्थ--आकार गुण और लीला में एकता के होने से एक ही विग्रह की अधिकता से अनेक अनेक स्थानों से आविर्भाव हुआ तिसको प्रकाश कहते हैं जैसे द्वारिका के प्रति मन्दिर में श्रीकृष्ण जी पृथक पृथक सबको दिखाई देते थे--कभी कभी श्रीकृष्ण जी चतुर्भुज रूप होजाते हैं सो चतुर्भुज रूप भी द्विभुज का प्रकाश है ।

(२) अवतारः--

सृष्टिगत समस्त जीव गण भगवत् की एकसे अष्ट शक्त्यंतरगत हैं अर्थात् जीवगण भगवत् की एक से आठ शक्ति तक धारण करने की शक्ति रखते हैं और इस से आगे किसी केन्द्र द्वारा ९ से १५ तक जो शक्ति वा कला प्रकट हुआ करती हैं उनको अंशावतार और पूर्ण १६ शक्ति वा कला प्रकट होने को पूर्णावतार कहते हैं--

भगवत् की अनन्त शक्तियों में से केवल षोड़ष शक्ति वा कला प्रकट हुआ करती हैं ।

श्रीकृष्ण पूर्ण कला सहित अपनी इच्छानुसार प्रकट हुए थे इसी हेतु उनको षोड़ष कल अवतार कहते हैं जो आगे भली प्रकार सिद्ध किया जावैगा--जगत् में जब कभी किसी विशेष कारण से किसी जीव में विशेष शक्ति उत्पन्न होकर अन्य जैव शक्तियों को दबा देती है तब उस उठा हुई

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शक्ति के दवाने को उसी के दवाने योग्य जो महान् शक्ति किसी केन्द्र द्वारा प्रकट होती है उसको अवतार कहते हैं -

श्रीकृष्ण जी अपने स्वयं रूपादि से तदेकात्म रूप और शक्ति भेदके द्वारा विश्व का कार्य करने को नवीन की नाईं अवतरण करते हैं उनके ऐसे अवतरण को अवतार कहते हैं सो अवतार तीन प्रकार के हैं अर्थात् पुरुषावतार, गुणावतार और लीलावतार--जो शुद्ध अर्थात माया संसर्ग से रहित माया वद्ध की समान प्रतिभास होता है और परमेश्वर का जो अंश प्रधान गुण संवद्ध की समान प्रकृति और प्राकृत का वीक्षरागादि कर्ता है जिस से अनेक प्रकार के अवतार होते हैं शास्त्र में उसको ही पुरुष कहकर वताया है--विष्णु अर्थात् मूल संकर्षण के पुरुष नामक तीन रूप शास्त्र में कहे हैं इन में जो महत्तत्व के सृष्टि करनेवाले हैं उन को प्रथम पुरुष कहते हैं - महत्तत्व के सृष्टि करने वाले प्रलय काल में समस्त जीव संकर्षण के शरीर में लीन हो जाते हैं उन की उपाधि को उत्पन्न करने के लिये वह पुरुष जव प्रकृति की ओर देखते हैं तव प्रकृति को गुण क्षोभ होने से महत्तत्व की उत्पत्ति होती है इस ही पुरुष का नाम संकर्षण, कारणार्णव शायी तथा महाविष्णु है--यही विश्व के अंकुरस्वरूप और प्रकृति अर्थात् महासमष्टि के अन्तर्यामी हैं --

अण्डस्थित जीव समष्टि अर्थात् हिरण्यगर्भ के अन्तर्यामी को द्वितीय पुरुष कहते हैं और जो सर्वभूत के अर्थात्

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

व्यष्टि के अन्तर्यामी हैं उन को तृतीय पुरुष कहते हैं--इन त्रिविध पुरुषों के यथावत् ज्ञान होजाने से संसार से निवृत्ति हो जाती है--इनही तीन पुरुषों में से प्रथम को संकर्षण द्वितीय को प्रद्युम्न और तृतीय को अनिरुद्ध कहते हैं--पुरका अर्थ शरीर उसमें नियामक रूप से जो वास करता है उसको पुरुष कहते हैं---

प्रथम पुरुष प्रकृति की ओर जब देखते हैं तो उसको गुण क्षोभ होने से महत्तत्व तिससे अहंकार तिसके सात्विकांश से मन, राजसांश से दश प्रकार की वाह्य इन्द्रिय और तामसांश से पंच तन्मात्रा की सहायता कर के पंच भूत की उत्पति होती है। इस से ब्रह्माण्ड रचित होने पर उस में जो अन्तर्यामी रूप से प्रवेश करते हैं उनको द्वितीय पुरुष प्रद्युम्न कहते हैं ब्रह्माण्ड के सर्वभूत में जो पुरुष अन्तर्यामी रूप से वास करते हैं उन को तृतीय पुरुष अनिरुद्ध कहते हैं--

श्री ब्रह्मा जी ।

इन्हीं द्वितीय पुरुष प्रद्युम्न से सत्वादि त्रिगुण के अधिष्ठाता विष्णु, ब्रह्मा और रुद्र नाम से कहाते हैं। ब्रह्मा दो प्रकार के हैं प्रथम ईश्वर कोटि के और द्वितीय जीवकोटि के--जीव कोटि अर्थात् कभी जीवभी उच्च कर्म द्वारा ब्रह्मा होजाता है उस समय प्रथम ब्रह्मा ब्रह्म लोक में कुछ काल के लिये स्थित रहते हैं और ईश्वर कोटि के ब्रह्मा जो रजोगुण के अधिष्ठाता हैं गुणावतार कहाते हैं परन्तु यह पुरुष कभी गुण बद्ध नहीं होते

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किन्तु अन्तर्यामी रूप से रहते हैं केवल गुणों के परिचालक हैं। यथा ब्रह्मसंहिता में लिखा है—

श्लोक भास्वान् यथाश्म शकलेषु निजेषु तेजः स्वीयं कियत् प्रकटयत्यपि तद्वदत्र। ब्रह्मा य एव जग दण्ड विधान कर्त्ता गोविन्द मादि पुरुषं तमहं भजामि—

अर्थ—सूर्य जिस प्रकार अपने कान्त मणि में अपना कुछ तेज प्रकाश करके दाहादि कार्य किया करते हैं वैसे ही जो ब्रह्मा जी में अपनी सृष्टि शक्ति से आविष्ट होकर ब्रह्माण्ड में व्यष्टि रचना करते हैं मैं उन आदि पुरुष गोविन्द का भजन करता हूं—

गर्भोदशाई की नाभि पद्म से इन (जीव कोटि) ब्रह्मा का जन्म हुआ है किसी कल्प में जल अर्थात् गर्भोदक से और किसी किसी कल्प में तहां के तेज वायु आदि से अर्थात् जिस कल्प में परमेश्वर की जैसी इच्छा होती है उस कल्प में इसी प्रकार से ब्रह्मा का जन्म हुआ करता है।

श्री गुरु जी।

अंश दो प्रकार के हैं अर्थात् स्वांश और विभिन्नांश – जैसे भगवान् के शय्या रूप आधार शक्ति शेषजी स्वांश ईश्वर कोटि और भूधारी शेषजी आधार शक्ति युक्त विभिन्नांश जीव कोटि हैं वैसे ही स्वांश रुद्र ईश्वर कोटि हैं और निर्गुण होकर भी तमोगुण के योग अर्थात् सान्निध्य मात्र से तमोगुण की सहायता करते हैं यथा ब्रह्म संहिता में– श्लोक—क्षीरं यथा दधि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विकार विशेष योगात् संजायते नतुततःप्रथगस्ति हेतोः । यः शंभु तामपि तथा समुपैति कार्य्यात् गोविन्दमादि पुरुषं तमहं भजामि ॥

अर्थ– ज़िस प्रकार दूध विकार विशेष के योग से दही होजाता है परन्तु वह दही अपने कारण रूप दूध से कभी भी पृथक वस्तु नहीं वैसे ही जो संहार कार्य्य के निमित्त रुद्र रूप से अवतरण करते हैं मैं उन आदि पुरुष गोविन्द जी का भजन करता हूं–

किसी कल्प में ब्रह्माजी के ललाट से, किसी कल्प में विष्णु जी के ललाट से और किसी कल्प के अंत में संकर्षण से भी कालाग्नि रुद्र का जन्म हुआ करता है–

गर्भोद शायो प्रद्युम्नजी चतुर्भुज अनिरुद्ध रूपी अविष्कार और लोक पद्म में प्रवेश पूर्वक क्षीरसमुद्र में शयन करके क्षीराब्धिशायी नाम को प्राप्त हुये हैं वास्तव में विष्णुजी को कारणार्णव शायी और गर्भोद शायी का विलास कह कर अभेद हेतु से विष्णु को नारायणादि नामसे पुकारा है।

विष्णु लोक तथा पुरा का वर्णन।

रुद्र लोक के ऊपरी भाग में पंचायुत योजन के परिमाण का विष्णु लोक नामक सर्व लोक अगम्य जो लोक है उसके ऊपर सुमेरु से पूर्व की ओर लवणसमुद्र के मध्यभाग में जल में स्थित जिस को देखने के लिये बीच बीच में ब्रह्मा जी जाया करते हैं ऐसा बड़े आकार का स्वर्ण मय विष्णु लोक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कहा गया है—तिस लोक में जनार्द्दन विष्णु जी लक्ष्मी सहित शेष रूपी शय्या पर वर्षा के चार मास सोते रहते हैं मेरुकी पूर्व दिशा में क्षीरसमुद्र के मध्य क्षाराम्बुधि मध्यवर्त्तिनी शुभ्र वर्ण की और एक पुरी है जिसमें भगवान् विष्णु जी लक्ष्मी सहित शेषासन पर बैठा करते हैं यहां भी । वर्षा के चार मास प्रभुजी निद्रा का सुख अनुभव करते हैं तिस के ही दक्षिण दिशा में क्षीर सागर के बीच पच्चीस हज़ार योजन के परिमाण वाला श्वेतद्वीप नामक परम सुन्दर एक द्वीप है—पुराणादि का भिन्न भिन्न मत कल्पों की अपेक्षा से हुआ करता है सर्वत्र यही सिद्धान्त है—

शास्त्र में विष्णु को सत्व गुण के अधिष्ठाता होने से सत्व तनु कहा है सत्व गुण उन के बहि रंग में अधिष्ठान करता है अन्तरंग में वह हरि निर्गुण स्वरूप परमेश्वर प्रकृति से परे सर्व साक्षी हैं और उनका भजनकरने से निर्गुणता प्राप्त होती है इस हेतु विष्णु भक्ति की नित्यता ही विधान की है, जिस को न करने से प्रत्य वाय दोष लगता है उसको ही नित्य कहते हैं—

(१) लीलावतार ।

जिस चेष्टा वा कार्य के साथ किसी प्रकार के आयास (उद्यम) का कोई सम्बन्ध नहीं, जो सर्वप्रकार से स्वेच्छाधीन है, जो त्रिविध विचित्रता से परिपूर्ण है और नित्य नित्य नई नई उल्लास तरंगों से युक्त है उस ही चेष्टा वा कार्य का

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नाम लीला है अतएव भगवान के जिन अवतारों में इस प्रकार की चेष्टा वा कार्य की प्रधानता वा अधिकता दिखाई दे वही लीलावतार है—

दैनन्दिन प्रलय में चतुःसन, नारद और मरीचादि ऋषिगण ब्रह्मा जी के साथ नारायण जी के शरीर में प्रवेश कर के कल्प के आरम्भ में निकलते हैं—

———

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अथ लीलावतार सूची ।

नं.	नामअवतार	नाम माता	नाम पिता	वास स्थन	समय	अन्य व्याख्या
१	श्री वाराह			महर्लोक		नृ० वाराह, चतुष्पाद वाराह (श्वेत वाराह हिरण्याक्ष दैत्य को मार कर जल में डूबी भई पृथ्वीको जल पर स्थित किया ।
२	श्री मत्स्य	वैवस्वत ने देखा	नाममनु	रसातल	युगोंके अंतमें	प्रलयकाल के जल से वेदों की रक्षाकरी —
३	श्रीयज्ञ	रुचिनाम आकूति	प्रजापति		स्वायंभुवीय मन्वन्तर	स्वायम्भुव मनु जी ने इनको हरि नाम से भी पुकारा है ।
४	श्री नर नारायण	मूर्त्ति	धर्म	श्री बद्रिकाश्रम	स्वायम्भुवीयमन्वंतर	मनकी उपशान्ति कर परब्रह्ममें निष्ठाकरने के लिये दो ऋषियों का अवतार धारण करके उग्र तप किया ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

५	श्रीकपिल देव	देवहूति	कर्दम ऋषि		स्वायम्भुवीय मन्वन्तर	वेदार्थ उपवर्द्धन सांख्य तत्व निरूपण किया और माता को तत्वज्ञानोपदेशद्वारा मोक्ष गतिदी एक दूसरे कपिलदेव ने वेद विरुद्ध तर्कजाल से परिपूर्णसांख्य रचा है (पाद्मे)
६	श्रीदत्तात्रेय	अनसूया	अत्रि		,,	कार्त्तवीर्य को मोक्ष सिद्धि दी (ब्रह्माण्डपुराण)
७	श्रीहयग्रीव	श्रीब्रह्मा जी की यज्ञाग्नि से प्रकट हुए		गभस्तितल	,,	जिस समय इन की नासा पुट से वेद निकले उस समय मधु-कैटभ दैत्य उनको चुरा ले गये तब उनको मारकर वेदों का उद्धार किया—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

८	श्रीहंस	जलसे व्यक्त हुए	अभि-		स्वायम्भुवीय मन्वन्तर	भक्तियोग, भगवत् और जीव तत्व का स्वरूप प्रकाशक ज्ञान कहा और श्री नारदजी से श्री मद्भागवत वर्णन की
९	श्रीध्रुवप्रिय वा पृश्निगर्भ	पृश्नि	सुतपा	मधुपुरीब्रह्म लोककेऊपर एक वास-स्थान है	स्वायंभुवीय मन्वन्तर	श्री ध्रुवके तपसे प्रसन्न हो भगवान् ने ध्रुवलोक प्रदान किया
१०	श्रीऋषभदेव	मेरुदेवी	नाभि		,,	परमहंस आश्रम दिखलाया
११	श्रीपृथुजी	राजावेणु दक्षिण मंथन आविर्भू	की भुजा से त हुए		,,	पृथ्वीसे सर्व प्रकारकी वस्तुओं को दुहकर निकाला ।
१२	श्रीनृसिंह	खंभसे आविर्भूतहुए		जनलोक	छठेचाक्षुषीय मन्वन्तर	श्री प्रहलाद हेतु उनके पिता हिरण्यकशिपु का संहार किया मुल्तान देश में ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१३	श्रीकूर्म	महासागर में अवतार क्रिया	धारण	महातल	,,	सुरासुर के समुद्र मथन समय मन्द्राचल पर्वत को अपनी पीठ पर धारण किया ।
१४	श्रीधन्वंतरि	,,	,,	,,	,,	अमृत्त का कमण्डल लिए हुए समुद्र से प्रकट हुए आयुर्वेद का प्रचार किया ।
१५	श्रीमोहनीजी	,,	,,	,,	,,	अजित मोहिनी मूर्त्ति धारण करि श्री शिव जी को आनन्द उत्पन्न कराया और सुरों को अमृत पान कराया ।
१६	श्रीवामनजी	अदिति	कश्यप	भुवर्लोक	वैवस्वतीय मन्वन्तर	इन का अवतार इस ब्रह्म कल्प में तीन वेर हुआ प्रथम स्वायम्भु० मन्वन्तर के मध्य वास्कलि नामक दैत्य के यज्ञ में दूसरा वैवस्वत

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

						मन्वन्तर में धुन्धु नामक असुर के यज्ञ में और सबसे पीछे वैवस्वत मन्वन्तर के प्रथम चतुर्युग में कश्यप जी से उत्पन्न हुए और बलि से प्रतिग्रह करके त्रिविक्रम रूप का आविष्कार किया
१७	श्रीपरशुराम	रेणुका	जमदग्नि		वैवस्वतमन्वन्तरकी सत्रहवीं चतुर्युगी	क्षत्रिय वर्ग को ब्राह्मण विद्वेषी जानकर २१ बेर पृथ्वी को क्षत्रिय सून्य किया।
१८	श्रीरामचन्द्र	कौशल्या	दशरथ	साकेत	चौबीसवीं चतुर्युगी के त्रेता में	आदिव्यूह वासुदेवने नर रूप में भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न सहित अर्थात् संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध तीन व्यूह सहित वा शंख चक्र

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

						और शेष के अवतार सहित सुरों के अर्थ रावण तथा कुम्भकरण का वध किया।
१९	श्रीवेदव्यास जी	सत्यवती	पराशर	ब्रह्मलोक		मनुष्यों को मन्द बुद्धि जान कर भगवत् ने आवेश अवतार से श्री व्यास द्वै पायन होकर वेद विभाग तथा महाभारतादि की रचना की।
२०	श्रीबलराम	देवकी रोहिणी	वसुदेव	गोलोक	द्वापर	प्रथम देवकी के गर्भ में फिर श्रीकृष्ण की आज्ञासे योग माया ने रोहिणी के गर्भ में से संचारित किया। ये गोलोक में दूसरे व्यूह संकर्षण हैं। ये ही भूमि धारी शेष जी से सम्मिलित होकर बलराम रूप से अवतरे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२१	श्रीकृष्णजी	देवकी	वसुदेव	,,	,,	यह लीला पुरुषोत्तम अवतार वेद ऋचा तथा सुर, ऋषि, मुनि रूपी गोपिकाओं द्वारा विशुद्ध प्रेम प्रदानार्थ तथा भूभार उतारने को हुआ ये द्वैभुज होकर भी ऐश्वर्य वश कभी चतुर्भुज हुआ करते हैं ये ही स्वयं ब्रह्म अपने स्वांश प्रथम ब्यूह वासुदेव से जगत कार्य्य तथा निज आल्हादिनी शक्ति श्री राधारूप से आनन्दा स्वादन करने को नाना लीलाद्वारा विलास करते हैं इनहीं के विलास तथा प्रकाश अन्य समस्त अवतार हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२२	श्रीबुद्ध		अजिन		कलियुग	धर्म्मारण्यग्राम गयाजी में अवतार हुआ असुरों के विमोहित करने को कलि के दो हजार वर्ष पीछे हुआ है और नैमिषारण्य में सूत जी के भागवत् कथा कहने तक यह अवातार नहीं हुआ था
२३	श्रीकल्कि		विष्णु शर्मा ब्राह्मण		कलिके अंतमें	सम्भल मुरादाबाद में होगा जिस समय राजालोगों का सुभाव चोर की नाईं होजायगा और अत्यन्त पाप से पृथ्वी व्याकुल और भार उठाने को असमर्थ होगी तब अवतार होकर धर्म स्थापित करेगा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चतुः सन (सनत कुमारादि) और श्री नारद को मिला कर २५ लीला अवतार हुये

यह समस्त अवतार प्रायः हर एक कल्प में हुआ करते हैं इसीलिये यह २५ अवतार लीला अवतार कहाते हैं श्री यज्ञ और श्री बामन जी जो लीला एवं मन्वन्तरावतार दोनों में सम्मिलित हैं उनको छोड़क १२ मन्वन्तरावतार और ४† युगावतार मिलाकर सब ४१ अवतार कहे हैं । इति लीलावतार समाप्तं —

(२) मन्वन्तरावतार—

सचराचर तत्तन्मन्वन्तरीय इन्द्र शत्रुविनाश द्वारा देवताओं के मध्य में भगवान् मुकुन्द जी का जो इन्द्र की सहायता में आविर्भाव है वही मन्वन्तरावतार है यज्ञादि अवतारों का कल्पावतारों में निवेश होना उचित होने पर भी प्रत्येक मन्वन्तर के काल तक पालन करनेसे उनको मन्वन्तरावतार भी कहा जाता है स्वायम्भुवीय आदि १४ मन्वन्तरों में श्री यज्ञ से वृहद्भानु तक १४ अवतार निर्दिष्ट हुये हैं —

† बासुदेय, सकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(२) मन्वन्तरावतार ।

नं०	नामअवतार	नाम माता	नाम पिता	वासस्थान	समय	अन्य व्याख्या
१	श्रीयज्ञ	आकूति	रुचि		स्वायम्भुवीय मन्वन्तर	इनका वर्णन लीलावतार में हो चुका है ।
२	विभु	तुषिता	वेदशिरा		स्वारोचिषीय मन्वन्तर	२८ हज़ार मुनिगणों ने इन कौमार ब्रह्मचारी भगवान् विभुजी से ब्रह्मचर्य सीखा ।
३	सत्यसेन	सूनृता	धर्म		औत्तमीय मन्वन्तर	सत्यव्रत नामक भ्राताओं के साथ उत्पन्न होकर इन्द्र के सखा बन कर राक्षस और दुःशील भूत गणों को नाश किया ।
४	हरि	हरिणी	मेधा		तामसीय म०	ग्राहसे गजेन्द्र का उद्धार किया

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

५	वैकुण्ठ	विकुण्ठा	शुभ्र	वैकुण्ठ	रैवतीय मन्वन्तर	रमादेवी की प्रार्थना से उनके प्रसन्नतार्थ सत्यलोक के ऊपरी भाग में वैकुण्ठ का प्रकाश किया
६	अजित	सम्भूति	वैराज	ध्रुवलोक	छठे चाक्षुषीय मन्वन्तर	समुद्र को मन्थन करके देवताओं के लिये अमृत लाये — इन्हीं ने कूर्म रूप से मन्द्राचल को धारण किया था -
७	वामन	अदिति	कश्यप	भुवर्लोक	सावर्णीय मन्वन्तर	इनका वर्णन लीलावतार में हो चुका है।
८	सार्वभौम	सरस्वती	देवगुह्य	-	,,	पुरन्दर नामक इन्द्र से स्वर्ग का राज्य लेकर राजा बलि को अर्पण करेंगे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

९	ऋषभ	अम्बु धारा	आयुष्मान		दक्षसावर्णीय मन्वन्तर	इनको प्राप्त की हुई त्रलोकी को अद्भुत नाम इन्द्र भोग करैगा ।
१०	विष्वक्सेन	विषूची	विश्वजित		ब्रह्मसावर्णीय मन्वन्तर	शम्भु नामक इन्द्र से इनकी सख्यता होगी ।
११	धर्मसेतु	वैधृता	आर्यक		धर्मसावर्णीय मन्वन्तर	अवतार धरि त्रलोकी का पालन करैंगे ।
१२	सुधामा	सूनृता	सत्य सहा		रुद्रसावर्णीय मन्वन्तर	रुद्र सावर्णीय मन्वन्तर का पालन करैंगे ।
१३	योगेश्वर	वृहती	देवहोत्र		देवसावर्णीय मन्वन्तर	देवराज का कार्य्य साधन करैंगे –
१४	वृहद्भानु	विनता	सत्रायण		इन्द्रसावर्णीय मन्वन्तर	कर्म सन्तति का विस्तार करैंगे –

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वर्ण और नाम से श्री कृष्ण जी सतयुग में शुक्ल, त्रेता में लाल, द्वापर में कृष्ण और कलियुग में पीत कहे जाते हैं—मन्वन्तरावतार ही युगावतार हुआ करते हैं—प्रायः प्रत्येक कल्पमें मनुगणों की स्वायम्भुवादि नाम से और मन्वन्तरादि अवतारों की यज्ञादि नाम से अभिव्यक्ति होती है—न्यूनाधिक्य शक्ति करके अवतार चार प्रकार के हैं अर्थात् आवेश प्रभाव, वैभव और परावस्थ—

सत्य, त्रेता और द्वापर में अवतार प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देते हैं किन्तु कलियुग में साधारणतः दिखाई नहीं देते इसी-लिए शास्त्र में उनको त्रयुग के नाम से पुकारा है कलियुग में नाराए जी, पहिले उत्पन्न हुए महत्तम प्राणिवर्ग में प्रवेश करके अपने अभिप्रेत कार्य को साधन किया करते हैं - समस्त अव-तारों के वासस्थान परव्योम में ही शास्त्रों ने कहे हैं आवेशाव-तार तत् तत् अवतारों में लीन हो जाते हैं - जो विद्वान छः प्रकार के लिंग और अन्वयव्यतिरेकादि के द्वारा शास्त्र का भली भांति विचार करते हैं अर्थात् उपक्रम उपसंहार, अभ्यास, अपूर्वता, फल, अर्थवाद, उपपत्ति से विचार करते हैं वे विद्वान परब्रह्म श्रीकृष्ण से ही समस्त अवतारों का आविर्भाव मानते हैं और श्रीकृष्ण का ही अंश और विलास कहते हैं क्यों कि जन्म गुह्याध्याय में सिद्धांत किया है "एते चांशकलाः पुंसः कृष्णस्तु भगवान्स्वयम्" अर्थात्समस्त अवतारों के अंशी श्रीकृष्ण परमात्मा ही हैं और श्रीकृष्ण ही परावस्थापन्न

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हैं और शास्त्रों में सम्पूर्णावस्थ को ही परावस्थ कह कर निर्णय किया है और वे ही षड़ गुण सम्पन्न हैं वह षड़ गुण यह हैं ऐश्वर्य (प्रभातिशय) १, वीर्य (मणि, मंत्र और महौषधि की नाईं अचिन्त्य प्रभाव) २, यश (ससद्गुण शाली कह कर विख्यात) ३ श्री (सर्व विधि सम्पत्ति) ४, ज्ञान (सर्व ज्ञाता) ५, वैराग्य (प्रपंच में अनासक्ति) ६, इन छः गुणों की अधिकता श्री कृष्ण ही में है—एक दीपक से अनेक दीपकों की उत्पत्ति होने पर भी जिस प्रकार मूल दीपक की प्रधानता है ऐसे ही श्री कृष्ण से ही और अवतारों की अभिव्यक्ति होने पर भी स्वयं भगवान् श्री कृष्ण जी में भगवत्ता की अधिकता रहैगी — जिन भगवत् पार्षदों ने शाप वश असुर हिरण्यकशिपु और रावण होकर मुक्ति नहीं पाई थी उन्ही पार्षदों ने दन्तवक्र और शिशुपाल होकर सायुज्य मुक्ति प्राप्त की (श्री विष्णु पुराण में मैत्रेयजी का प्रश्न और पराशर जी का उत्तर देखो)-

जिस में सर्वदा शक्ति का अल्प प्रमाण से विकाश होता है उस को अंश और जिसमें स्वेच्छानुसार अनेक प्रकार की शक्तियों का प्रकाश हो उसको पूर्ण अर्थात् अंशी कहते हैं—

ऐश्वर्य, माधुर्य, कृपा और तेज प्रभृति गुणों को शक्ति कहते हैं —शक्ति की अभिव्यक्ति और अनभिव्यक्ति ही तारतम्य का कारण है—भगवत् स्वरूप जिस प्रकार भक्तिहीनवाद करनेवालों के ध्यान में नहीं आसक्ता वैसे ही भगवत् शक्ति भी चिन्तातीत है—अनेक प्रकार के विरुद्ध कार्य समूह के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आश्रय से देखकर ही अनुमान किया जाता है कि भगवत् श्री कृष्ण की शक्ति अचिन्त्य है ब्रह्म सूत्र कार ने कहा है कि "अचिन्त्याः खलु ये भावा न तांस्तर्केण योजयेत "अर्थात् अचिन्त्य विषय में तर्क को नहीं उठाना चाहिए—भगवत् शक्ति विलास की जो विरुद्धता प्रतीत हो उस को हो अचिन्त्य ऐश्वर्य कहते हैं यह उसका भूषण ही है दूषण नहीं जैसे विश्व पालकत्व और उसमें औदासीन्य यह दो विरुद्ध नहीं हासक्ते।

श्रीकृष्ण की षोड़श कला हैं वैष्णवगण शास्त्र दर्शनानुसार उन सोलह कला को शक्ति कह कर कीर्त्तन करते हैं और वे सोलह कला यह हैं—श्री, भू, कीर्ति, इला, लीला, कान्ति, विद्या विमला, उत्कर्षिणी, ज्ञाना, क्रिया, योगा, प्रह्वी, सत्या, ईशाना, और अनुग्रहा यही मुख्य सोलह शक्ति हैं—

जिस काल में प्रथम पुरुष रूप से उत्पादित पंच भूत द्वारा ब्रह्माण्डरूप पुरी निर्माण करके तिस में द्वितीय पुरुष रूप से प्रवेश करते हुए थे और विराट शरीर को उत्पन्न करके स्वांश द्वितीय पुरुष रूप से तिस में प्रविष्ट हो पुरुष नाम को प्राप्त हुए हैं यह गर्भोदशायी का विलास जो चतुर्भुज मूर्त्ति है वह लोक पद्म में प्रवेश करके विष्णु नाम से पुकारे जाकर क्षीराब्धि में शयन करते हैं यही विष्णु जी देवादि से लेकर स्थावर पर्यन्त प्राणियों के हृदय में अन्तर्यामी होकर अनेक रूपों के समान स्थित हैं सात्वत तंत्र में तृतीय पुरुष सर्व भूतस्थ कह कर विष्णु जी के जिस रूप का वर्णन है

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वह इन गर्भोदशाई विष्णु की विलास मूर्ति है—अतएव देवताओं ने क्षीर सागर के किनारे पर जिन विष्णु जी की उपासना की थी वही अवतीर्ण होकर कृष्ण नाम से पुकारे गये हैं यही युक्ति युक्त है (भ. १०. १. २३) वसुदेवगृहे साक्षाद्भगवान्पुरुषः परः । जनिष्यते तत्प्रियार्थं सम्भवन्तु सुरस्त्रियः ॥ अर्थात् परम पुरुष साक्षात् भगवान् श्री वसुदेवजी के गृह में प्रादुर्भाव होंगे उनका प्रिय कार्य्य साधन करने को समस्त देवताओं की स्त्रियें जन्म लें—इस देववाणी में पर शब्द पुरुष का और साक्षात शब्द भगवान् का विशेषण होने से यह स्थित हुआ कि महत्स्रष्टा पुरुष श्री कृष्ण जी का अंश है और जिस का अंश पुरुष है उसका ही अंश प्रकृति भी है जिससे संसार की उद्भावादि हुआ करती है—

(भा. १०. १४-१४) नारायणस्त्वं नहि सर्व देहिनामात्माऽस्यधीशोऽखिल लोक साक्षी । नारायणाऽङ्गं नरभूजलायनात् तच्चापि सत्यं न तवैव माया ॥ अर्थात् हे प्रभो तुम नारायण हो ! हे अधीश ! जिस से कि तुम सर्व प्राणियों के आत्मा हो और अखिल लोक के साक्षी हो अतएव नर-भू अर्थात परमात्मोत्पन्न जल अर्थात कारणार्णव और गर्भोदक का आश्रय करके जो नारायण नामा हैं वह तुम्हारे अंश हैं वह पुरुष नारायणत्व परमार्थ सत्य, मायिक अर्थात् अनित्य नहीं है। श्री गीता में भी कहा है " मै एकांश द्वारा इन सब को धारण किए हुए हूँ " तुम्हारा यह अंश सत्य है विराट रूप को

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

समान मायिक नहीं हैं—चिच्छक्ति और माया शक्ति वैभव में परिपूर्ण तुम्हारा ऐश्वर्य चतुष्पाद है और पुरुष नारायण की माया शक्ति वैभव रूप ऐश्वर्य एक पाद है यथा ब्रह्मसंहितायाँ यस्यैक निश्वसित काल मथावलम्व्य जीवन्ति लोम विलजा जग दण्ड नाथाः ॥ विष्णुर्म्महान्स इह यस्य कला विशेषो गोविन्द मादि पुरुषं तमहं भजामि ॥ अर्थात् जिस का एक निश्वास काल अवलम्बन करके लोम कूप सम्भूत जगन्नाथ ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र अपने अपने अधिकार में प्रवृत्त रहते हैं वह महा विष्णु भी तिस की एक कला हैं मैं उन गोविन्द का भजन करता हूँ—विष्णु धर्मोत्तर में मार्कण्डेय ऋषि ने वज्र नाभि के प्रश्न पर स्पष्ट कहा है कि प्रलयाब्धि स्थित यह पुरुष तुम्हारे पिता अनिरुद्ध हैं और मैंने वारम्वार वालक रूप जगत् पति देव का दर्शन किया और उन की माया से जान नसका अन्त में ब्रह्मा जी से सुना कि वह जगत पति तुम्हारे पिता अनिरुद्ध हैं अर्थात् क्षीरोदशायी का अवतार होने पर मुनिवर कहते हैं कि वह तुम्हारे प्रपितामह श्रीकृष्ण जी हैं कारण कि वज्रनाभ के पिता अनिरुद्ध तिनके पिता प्रद्युम्न और तिनके पिता श्रीकृष्ण जी हैं-(भा०-३-३२-३३) यथेन्द्रियैः प्रथग्द्वारैरर्थो वहु गुणाश्रयः। एकोनानेयते तद्वद्भगवान् शास्त्र वर्त्मभिः।

अर्थ – वहु गुणाश्रय एक क्षीरादि द्रव्य जिस प्रकार चक्षु आदि पृथक २ इन्द्रिय द्वारा अनेक रूप से ग्रहण किये जाते हैं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वैसे ही एक भगवान उपासना भेद के कारण अनेक रूप से प्रतिभात हुआ करते हैं अर्थात् एक भगवान् में अनेक प्रकार के स्वरूपों की विद्यमानता होने पर भी उपासना के अनुसार उन उपासकों में तत्तत् उपयोगी स्वरूप प्रकाशित होता है- जिस प्रकार दुग्धादि की मधुरता रसना हो ग्रहण करती है दूसरी इन्द्रिय नहीं और चक्षु आदि रूप रसादिकों में से अपने अपने विषय को ग्रहण करने में समर्थ हैं परन्तु मन समस्त इन्द्रियों के ग्राह्य विषय को ग्रहण किया करता है तथा अन्यान्य उपासना वर्ग केवल अपने ही उपयोगी स्वरूप को ग्रहण करने में समर्थ होता है परन्तु मन स्थानीय भक्ति उन उन उपासना के विषय समस्त स्वरूप ही ग्रहण कर सकती है इस प्रकार प्रधान २ शास्त्रों में ब्रह्मसे माधुर्यादि गुणों की अधिकाई के कारण श्रीकृष्ण जी का उत्कर्ष कहा गया है। ज्ञान योग द्वारा भगवत्स्वरूप निर्विशेष ब्रह्म रूप से प्रकाश होता है और भक्ति योग द्वारा विचित्र अनन्त स्वरूप शक्ति विशिष्ट भगवत् रूप का प्रकाश हुआ करता है सुतराँ स्वरूप शक्ति की विचित्रता के कारण ब्रह्म की अपेक्षा भगवान् का उत्कर्ष साधित हुआ -इस विश्व के हित के लिये अवतरे हुए सगुण उनकी गुणावली को कोई भी गणना करने में समर्थ नहीं - यदि कहो कि गुण मात्र ही प्रकृति के कार्य्य हैं इनकी गिनती नहीं हो सकती फिर इस में आश्चर्य का विषय कौन सा है तो तुम यह नहीं कह सकते, क्यों कि भगवान् के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गुण कभी भी प्राकृत नहीं हो सकते—गुणातीत वस्तु में प्राकृत गुण का संसर्ग नहीं हो सकता उनके समस्त गुण ही उनके स्वरूप भूत हैं और निश्चय ही स्वरूप हैं—अतएव श्रीकृष्ण जी असंख्य अप्राकृत गुण शाली अपरिमित शक्ति विशिष्ट और पूर्णानन्द घन विग्रह हैं और वैचित्री हेतु से निर्गुण ब्रह्म से श्रेष्ठ हैं-यथा

श्लोक-ब्रह्म निर्धर्म्मकं वस्तु निर्विशेष ममूर्त्तिकम् । इति सूर्योप मस्यास्य कथ्यते तत्प्रभोपमम् ॥ अर्थ-निर्गुण निर्विशेष और अमूर्त्त ब्रह्म सूर्यस्थानीय श्री कृष्णजी के प्रभास्थानीय कह कर उक्त हुए हैं-श्री भागवते-वदन्ति तत्तत्त्व विदस्तत्वं यज्ज्ञान मद्वयम् ॥ ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते ॥

अर्थ—भगवान् श्री कृष्ण का अद्वय ज्ञान तत्वस्वरूप ब्रह्म आत्मा, भगवान् तीन रूप में विहार करता है।

सर्व अवतारों के मध्य में श्री कृष्ण की सामान्य गणनाकी गई है तब श्रीशुकदेव जी निश्चय करते हैं यथा श्री मद्भागवते

श्लोक—एते चांशकलाः पुंसः कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्॥ इन्द्रारिव्या कुलं श्लोकम्मृड़यन्ति युगे युगे॥ अर्थात् सम्पूर्ण अवतार पुरुषावतार के कला अंश से हैं सो भी श्रीकृष्ण स्वयम् भगवान् के अंश से हैं यदि कहो कि श्रीकृष्ण नारायण के अवतार हैं तौ भी जो वस्तु अज्ञात होती है उसको विधेय कहते हैं और जो ज्ञात वस्तु है उसको अनुवाद अतएव अनुवाद प्रथम आता है अर्थात् अवतार मध्य ज्ञात वस्तु कृष्ण भए

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

और तिन का विशेष ज्ञान अर्थात 'पुरुष के अंश' यह अज्ञात वस्तु भई सो पीछे रही अतएव "कृष्ण स्वयम् भगवान्" यह साध्य हुआ और स्वयम् भगवान् का कृष्णत्व बाध्य हुआ —

श्री चैतन्य चन्द्रोदये:-या या श्रुतिर्जल्पति निर्विशेषं सा साऽभिधत्ते सविशेष मेव । विचार योगे सतिहन्त तासां प्रायो बलीयः सविशेष मेव ॥ अर्थ—षड़ैश्वर्य परिपूर्ण स्वयम् भगवान्को निराकार कहना भूल है कारण कि वेद और पुराण ब्रह्म को वृहद्वस्तु ईश्वर लक्षण कह कर प्राकृत निषेध अप्राकृत स्थापन करते हैं और उसी ब्रह्म से यह विश्व उत्पन्न तथा जीवित रहकर लय हो जाता है अतएव अपादान, कारण और अधिकरण यह तीन सविशेष के चिन्ह हैं क्योंकि जब भगवान् ने बहु होने की इच्छा करी और प्राकृत शक्ति की ओर अवलोकन किया उस समय प्राकृतिक मन तथा नयन न थे किन्तु अप्राकृत दिव्य मन तथा नेत्रही थे अतएवपूर्ण ब्रह्मस्वयम् भगवान् श्रीकृष्ण ही हैं क्योंकि वेदके निगूढ़ अर्थ पुराण ही से जाने जाते हैं यथा श्रीमद्भागवते —श्लोक-अहो भाग्य महो भाग्य न्नन्द गोपाल व्रजौकसाम्॥ यन्मित्रम्परमानंदम्पूर्णम्ब्रह्मसनातनम्॥ अवतार होने का कारण श्री भगवद्गीताके निम्न लिखित दो श्लोकों से विदित है यथाः—श्लोक - यदायदाहि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत । अभ्युत्थान मधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्य हम् (४-७) (१) परित्राणाय साधूनां विनाशीय च दुष्कृताम् । धर्मं संस्थापनार्थाय संभावामि युगे युगे ॥ (४—७ (२)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अर्थ—जब जब धम क्षीण होता है तथा अधर्म बढ़ता है हे अर्जुन तब तब मैं अवतार धारण करता हूं– (१) जब धर्म क्षीण तथा अधर्म बढ़ता है तब मैं साधु महात्मा वैष्णवों के परित्राण के लिये तथा पापियों के विनाश के लिये और वैदिक धर्म स्थापन करने को युग युग में अवतार धारण करता हूं (२) इन श्लोकों से यही प्रतीत होता है कि भगवदावतार में माया हेतु नहीं यदि माया हेतु होती तो माया भगवान् को साधीन करके बार बार जीव के सदृश जन्म देती भगवान् अपनी इच्छा से धर्मक्षय होनेपर ही अवतार धारणकर सकते हैं क्योंकि वह स्वतन्त्र हैं अन्य अंशावतार से अंशी श्री कृष्ण में चार सहज गुण विशेष हैं अर्थात् लीला*विशेष प्रेम विशेष माधूर्य्य विशेष और वेणु नाद–त्रिगुणात्मिका सृष्टिमें नित्य ही सुरासुर संग्राम हुआ करता है यह क्या है यह तीनों गुणों के न्यूनाधिक्य हो का परिणाम है उदाहरणार्थ अपने शरीर को ही लीजिये कि कभी सत्व गुण मिश्रत रजो गुण की सृष्टि होने से धर्मानुकूल आचरण होते हैं और कभी दुःसंग द्वारा तमोगुण मिश्रत रजो गुण बढ़ने से वह बढ़ा हुआ सत्व गुण द्रव कर राग, मात्स र्यादि दुष्कर्म होने लगते हैं सृष्टि में यावत् पदार्थ दीखते हैं उन सब में प्रत्येक पदार्थ का एक संरक्षक अर्थात् उस वस्तु को ठीक मार्ग पर चलाने वाला परिचालक रहता है उसको उस पदार्थ का देवता कहते हैं और जिस शक्ति द्वारा उस

*आध्यात्मिक, आधदैविक और अधिभौतिक लीला

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पदार्थ की रक्षा होती है उस शक्ति को उस देवता की देवी कहते हैं – सम्पूर्ण जगत् तीन भावों में बिभक्त है अर्थात् अधि भूत अधिदेव और अध्यात्मा और इन्हीं के द्वारा क्रम से कर्म उपासना और ज्ञान हो कर मोक्ष लाभ होता है—सृष्टि के सुरासुर संग्राम में जवतमो गुणी कर्म द्वारा तमो गुण प्रधान असुरों की शक्ति जिस केन्द्र तक बढ़ जाती है तब धर्म के ठीक ठीक रखने को अर्थात् उस धर्म के रक्षार्थ उसी केन्द्र की शक्ति जिस के द्वारा वह बढ़ी हुई शक्ति दबाई जासके, उत्पन्न होती है उसको अवतार कहते हैं जो इसी प्रकरण में पहले बताया गया है—किसी दो एक शक्ति शिशेष के दबाने को अंशावतार होता है और वह अवतार उस शक्ति बिशेष को दबा कर अन्तर्ध्यान हो जाता है परन्तु जब बहुत सी प्रबल तमोगुणी शक्तियां प्रबल तमोगुणी कर्मों द्वारा उत्पन्न हो जाती हैं और अंशावतार द्वारा उनका दमन असंभव हो जाता है तब उनके दबाने को पूर्ण शक्ति युक्त पूर्ण कला का अवतार होता है—यह पूर्णावतार भी सब कलाओं का पूर्ण रीति से बिकाश करके असुरों का दमन करके और समस्त आवश्यक कार्य करके अन्त हित हो जाता है - अंशावतार किसी एक व्यक्ति गत वा एक देश के उद्धार के लिये होता है और पूर्णावतार समस्त संसार के उपकार वा उद्धारके लिये होता है – वह मायातीत ज्ञानातीत परमात्मा अपनी पूर्णकला तथा दिव्य श्री कृष्ण नाम तथा रूप से नारायण नाम परम तपस्वी महर्षी की महान् जीवात्मा में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रविष्ट होकर द्वापरयुग के अन्त में जगत् के कल्याणार्थ अपनी ही इच्छा से अवतार धारण किया करते हैं यही अवतार का रहस्य है –

समस्त वर्ण कृष्ण वर्ण में लय होजाते हैं – श्रीकृष्ण की सच्छक्ति स्वरूपणी प्रकृति के नानावर्ण उनके तदेकात्मरूप होने से उन्हीं में लय रहते हैं और समय २ पर प्रकट हुआ करते हैं इसी लिये सत्व गुण प्रधान विष्णु के श्वेत वर्ण के भीतर पूर्ण पुरुषोत्तम श्री कृष्ण के कृष्ण वर्ण की झलक से विष्णु तथा उन के अन्य अंशावतार का श्याम वर्ण शास्त्रों में वताया गया है अब प्रश्न होता है कि श्री कृष्ण को श्यामनाम से भी पुकारते हैं इसका कारण यह है कि श्री कृष्ण अपनी आनन्द शक्ति स्वरूपणी श्री राधा जी का आश्रय लेकर कृष्णावतार धारण करते हैं इसी कारण से श्री राधाजी के गौर वर्ण के हृदयस्थ होने से श्रीकृष्ण का श्याम वर्ण दीख पड़ता है और जब परम प्रेम से हृदय में उस गौर रूप का वाहुल्य होता है तब वह स्वयम् श्रीकृष्ण चैतन्य रूप से अवतीर्ण हुआ करते हैं यह ही युक्तियुक्त है।

कवित्त – निर्गुण कहें कोऊ ब्रह्म को सगुण कोऊ वेद प्रमाण देकें वृथहिं लरत हैं। निर्गुण जो होय कैसे सगुण सो कह्यो जाय वेद गंभीर अर्थ चित्त न धरत हैं। सगुण है माधुर्य्य अरु निर्गुण ऐश्वर्य जान बिना माधुर्य्य ऐश्वर्य काको कहत हैं। बांकेपिय कांच माटी गुण लै के हीरा होत वृद्धि घन चढ़ाय

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बुद्धिमान परखत हैं । १ । कृष्ण हैं सगुण ब्रह्मताही को ऐश्वर्य लैके ब्रह्म को स्वरूप निगुण वेदन बतायो है । कोउ शक्ति संभव नहोय बिना शक्तिमान आदि ब्रह्म कृष्ण सह अचिन्त्य शक्ति गायो है । बांकेपिया सबै भ्रम छण हीं में नाश होत भागवत् शास्त्रता को तत्व दर्शायो है । सत्य जगत् जीव है चैतन्य शक्ति आनँद लै सत्य चिदानन्द संसार निर्मायो है ॥

इति अवतार प्रकरण समाप्त

अथ जीव प्रकरण

श्लोक भांडी रेश शिखंड मंडन वर श्री खंड लिप्तांग हे वृन्दारण्य पुरंदरस्फुरदमं देंदीं वरश्यामल । कालिन्दी प्रिय नन्द नन्दनपरा नन्दारबिन्देक्षण श्री गोविन्द मुकुन्द सुन्दर तनो मां दीन मानंदय॥

भगवत् सच्चिदानन्द रूप ईश्वर स्वरूप की स्वाभाविक तीन अंश में तीन शक्ति हैं आनन्दांश आल्हादिनी, सदंश सन्धिनी और चिदंश सम्बित् ज्ञान शक्ति इन में से अन्तरङ्गा चिच्छक्ति तटस्था जीवशक्ति और बहिरङ्गा माया शक्ति यह तीनों अचिन्त्य शक्ति सम्पन्न भगवत् की आज्ञाकारी होकर समस्त कार्य क्रिया करती हैं मायाधीश ईश्वर की माया शक्ति के वश होकर जीव शक्ति का संसर्ग हुआ करता है गीता अ० ७—४,५— भूमि रापोऽनलो वायुः खम्मनो बुद्धिरेवच । अहंकार इतीयम्मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा । १ ॥ अपरेयमितित्वन्या म्प्रकृतिंविद्धिमे पराम् । जीव भूताम्महा बाहो ययेदन्धार्य्यते जगत् ॥ २ ॥ अर्थ हे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पार्थ पृथ्वी, जल, वायु अग्नि, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार ये भी मेरी एक प्रकारकी अष्ट विधि सृष्टि है अर्थात् मेरी मुझसे अधिष्ठित तथा प्रेरित प्रकृति के ये आठ प्रकार के प्रथम परिणाम हैं यथा प्रकृति से महत्तत्व (बुद्धि), बुद्धि से अहंकार अहंकार से उक्त पंच सूक्ष्म भूत और मन ये उत्पन्न होते हैं ,, (१)

हे अर्जुन जो मैंने आठ प्रकार की प्राकृत रूपी अपनी सृष्टि कही है यह अपर निकृष्ट है क्योंकि चैतन्य की अपेक्षा जड़ निकृष्ट ही होता है इस सृष्टि से परे (उत्तम) जीव रूप मेरी सृष्टि है क्यों कि जीव भी मेरे अंश हैं और प्रलय में मुझ में लीन होकर सर्गादि में मुझ से ही प्रकट होते हैं इस जीव रूप मेरी सृष्टि ने ही जगत् जड़ वर्ग को धारण कर रक्खा है अर्थात् जड़ वर्ग के भीतर आत्म रूप होकर जीव निवास करते हैं ॥ २ ॥

जीव तीन प्रकार के होते हैं वद्ध, मुक्त, नित्य मुक्त—वद्ध वे हैं जो संसारमें पड़े हैं, मुक्त वे हैं जो भगवद्धाममें पहुँच कर फिर नहीं लौटते और नित्य मुक्त वे हैं जो अनादि काल से कभी संसार में प्रकट न होकर सदा से भगवद्धाम में ही रहकर भगवत् सेवा करते हैं—भगवत् धाम भी भगवत् स्वरूप अप्राकृत और नित्य अविनाशी है, जीव के प्रथम दो भेद हैं एक वद्ध द्वितीय मुक्त --वद्ध के भी दो भेद हैं एक भोग की इच्छा वाले द्वितीय मोक्ष की इच्छा वाले--अनादि कर्मों को कर के देह में अभिमान रखने वाला अज्ञानी वद्ध है वही

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्वर्गादि की इच्छा से बुभुक्षु कहाता है और जिस बद्ध जीव पर भगवत्कृपा होती है वह संसार सम्बन्ध से छूटने की इच्छा करता है वही मुमुक्षु कहाता है-- जो मुमुक्षु अपने ज्ञानादि के विश्वास को छोड़ कर भगवत्प्राप्ति में केवल भगवत्कृपा ही को उपाय मानते हैं वे प्रपन्न कहाते हैं और प्रपन्न भी दो प्रकार के हैं एक दृप्त द्वितीय आर्त्त—दृप्त प्रपन्न साँसारिक दुःखों से घबराता नहीं शरीर पात पर्यंत प्रारब्ध दुःखों को भोग कर शरीरान्त काल में परम धाम को प्राप्त होता है. जो प्रपन्न संसार संबन्ध को एक क्षणभी सहता नहीं और भगवत्प्राप्ति के लिये बड़ी शीघ्रता करता है वह आर्त्त कहाता है—

मुक्त जीव भी दो प्रकार के हैं नित्य मुक्त और बद्ध मुक्त - नित्य मुक्त वे हैं जो जन्म मरण के दुःख को प्राप्त नहीं होते और सदा भगवद्धाम में वास करते हैं यथा शेष, गरुड़, विष्वक्सेन इत्यादि यद्यपि ये भी धर्म रक्षार्थ कभी कभी भगवदाज्ञा से भगवत् समान अवतार धारण करते हैं तथापि इनको जन्म मरण दुःख स्पर्श नहीं करता इस हेतु इनकी नित्य मुक्तता में दोष नहीं- नित्य मुक्त भी दो प्रकार के हैं एक परिच्छद द्वितीय परिजन कीटकुण्डलादि जो भगवत् सामिग्री रूप हैं वे परिच्छद हैं और सेवा करने वाले शेषादिक परिजन कहाते हैं--

अनादि काल से संसार में रहकर कभी आचार्य तथा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भगवत्कृपा से जो मुक्त होते हैं वे वद्ध मुक्त कहाते हैं वे दो प्रकार के हैं भागवत् और केवल -जो भगवत् पर हैं वे भागवत् हैं उनमें से कोई भगवत् का ध्यान करते हैं कोई भगवान् की लीलाओं का और कोई गुणों का भगवत्धाम में ध्यान करते हैं तथा भगवत् की सेवा करते हैं. केवल भी दो प्रकार के हैं एक तो भगवद्धाम में जाकर संसार दुःखैकनिधिका अनुभव करते हैं द्वितीय अपने स्वरूप का अनुभव करते हैं इनको भगवत् सेवा का सौभाग्य प्राप्त न होने से इनका नाम केवल है इसी हेतु शास्त्र कारों ने मोक्ष चार प्रकार का कहा है अर्थात् सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य और सायुज्य-ये वद्ध जीव भी अनन्त हैं तथा वद्ध मुक्त और नित्य मुक्त भी अनन्त हैं इसी जीव सृष्टि को भगवान् कहते हैं कि 'अपरेयम् इत्यादि'--

जीव अणु नित्य, अनन्त. अव्यापक परमात्मा परमेश्वर) से भिन्न, चैतन्य, अविनाशी, कर्म का कर्ता तथा भोक्ता है-अणु—यथा वेद श्रुति "एषोऽणु रात्मा चेतसा वेदितव्यः" 'तेन प्रद्योते नैव आत्मा निष्क्रामति" "येवै चास्माल्लोकात् प्रयन्ति चन्द्रम समेव ते सर्वे गच्छन्ति"—श्री भगवान् ने भी गीता जी में कहा है "देहिनोऽस्मिन् यथा देहे कौमारं यौवनं जरा। तथा देहान्तरप्राप्ति र्धीरस्तत्र न मुह्यति ॥ (अ०२-११) अर्थात् शरीर ही का मरण तथा उत्पत्ति होती है जीवतो अणु और नित्य है वह न मरता है न उत्पन्न होता केवल एक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

देह छोड़ कर दूसरी देह में जाता है· यदि जीव व्यापक होता तो व्यापक पदार्थ एक स्थान से दूसरे स्थान पर नहीं जा सकता क्योंकि वह सर्बत्र ही व्यापक है—ईश्वर से भिन्न – यथा श्रुति "नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतना नामेको वहूनांयो विदधाति कामान्" अर्थात् जो एक चेतन है परमात्मा वह बहुत से जो नित्य चेतन जीव हैं उनके मनोरथों को सिद्ध करता है– और बामदेव शुकादि महानुभाव तो मुक्त हो गये हमतो अभी मुक्त नहीं हुए यदि जीव एक ही ईश्वर होता तो यातो सब मुक्त ही कहाते या सब वद्ध कहाते और श्री गीता के नीचे लिखे भये श्लोक में "सर्व" शब्द वहु वाचक है एक बाचक नहीं यथा (श्री भगवद्गीता अ० २—१२) नत्वेवाहं जातु नासं नत्वं नेमे जनाधिपाः। न चैव न भविष्यामः सर्वे वय मतः परम्' यदि कहो कि जीव ब्रह्म एक है केवल अंतः करण ही कर्म के फलों को भोगता है तो मोक्षावस्था में अन्तः करण तो रहता नहीं नष्ट हो जाता है और क्रिया मात्र का कर्त्ता तो अन्त· करण ही है और मोक्ष का फल भी अन्तः करण को होगा इस हेतु कृतिहानि अकृताभ्यागम दोष लगता है अत एव जीव ही कर्त्ता है यथा श्रुति ' विज्ञानं यज्ञं तनुते कर्माणि तनुतेऽपिच " तथा वेदान्त सूत्रे "कर्त्ता शास्त्रार्थ वत्वात्' अर्थात् शास्त्रकर्मादि फल का भोक्ता जीव है अत एव यह सिद्ध हो गया कि परमात्मा से जीव भिन्न हैं और जीव अनेक हैं परस्पर भी भिन्न हैं और जीव नित्य हैं जीवकी जीवता

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri
आम्नाय-ग्रन्थालय, भरतमिलाप, करौंदी वाराणसी-5

स्वरूपेण ही है कुछ अन्तः करण के अधीन नहीं है परमात्मा स्वामी है और जीव उसका दासानुदास है यथा वेद श्रुति भी कहती हैं' न तत्समश्चा भ्यधिकश्च दृश्यते" 'वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्" "तमीश्वराणां परमंमहेश्वरम् ' "पतिं पतीनां भुवनेश मीड्यम्"

स्मृति यथा—त्वं माता सर्व भूतान देव देवो हरिः पिता। दास भूताः स्वतः सर्वे ह्यात्मानः परमात्मनः"॥ बासुदेव परा वेदा बासुदेव परा मखाः। बासुदेव परायोगा बासुदेव पराः क्रियाः॥ बासुदेव परं ज्ञानं बासुदेव परंतपः बासुदेवं परो धर्मो बासुदेव परा गतिः"

इति

अथ जगत् प्रकरण

श्लोक—फुल्लेंदीवर कंतिमिन्दु वदनं बर्हावतं सप्रियं श्री वत्सांक मुदार कौस्तुभ धरं पीताम्बरं सुंदरम्. गोपीनां नयनोत्पलार्चित तनुं गोगोप संघा वृतं गोबिन्दं कल बेणु बादन रतं दिव्यांग भूषंण भजे॥

प्रपंच सत्, अनित्य, अनादि और अविनाशी है यथा वेद श्रुति 'यदिदं किं च तत्सत्य मित्या चक्षते" सूर्या चन्द्रमसौ धाता यथा पूर्वम कल्पयत्' भोक्ता भाग्यं प्रेरितारं चमत्त्वा" "ईक्षतेर्ना शब्दम्"

वेदान्त सूत्र कार श्री वेदव्यासजीने भी" परिणामात्"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इत्यादि सूत्र से प्रपंचको ब्रह्म का परिणाम बताया है इससे भी प्रपंच मिथ्या नहीं यदि मिथ्या होता तो प्रपंचको ब्रह्म का विबर्त बताते और अवश्य हेय* ही है कोई तरह भी उपादेय (†) नहीं हो सकता· घटादि के अभाव में मृतिका का विनाश नहीं हो जाता किन्तु केवल नाम रूप बदल जाता है इसी प्रकार कार्य अपने कारण में लीन होकर स्थित रहता है नष्ट नहीं हो जाता अतएव प्रलय समय समस्त प्रपंच माया में और माया ब्रह्ममें लीन होकर उसी ब्रह्म में स्थित रहती है और सृष्टि के आदि में प्रकट होकर प्रपंच रचना में सहायक हुआ करती है और इसी के सम्बन्ध से जीव अनादि काल से कर्म करने में तत्पर रहता है।

भावों के सम्रह का नाम संसार है-भावों का परिवर्तन क्षण क्षण में हुआ करता है इसी लिये संसार (जगत्) भी परिवर्त्तन शील है भाव मन द्वारा हुआ करते हैं अतएव मन भी चंचल कहा गया है-सर्व शक्तिमान् भगवत् की माधुर्य्य और ऐश्वर्य दो मुख्य शक्तियों के अन्तर्गत समस्त शक्तियां हैं इन्हीं दो शक्तियोंमें से प्रथम माधुर्य्य शक्ति से भावों की उत्पत्ति होती है किन्तु भावों के परिवर्त्तनके साथ माधुर्य्यका परिवर्त्तन कदापि नहीं होता कारण कि सुवर्ण के बने हुए कंकणादि के परिवर्त्तन से उसके कारण रूप सुवर्ण का विनाश नहीं हो जाता इसी प्रकार माधुर्य्य जो सत्य भगवत् का सत्य संकल्प रूपी एक

* त्याज्य † कारण

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अविनाशी रस है उसमें उसके भावरूपी संसार का लय हो जाया करता है जैसे एक मनुष्य के मन द्वारा उठे हुए भाव के परिवर्तन पर उस मनुष्य तथा उसके मन का विनाश नहीं हो जाता किन्तु मनमें वे भाव लय हो जाते हैं। यथार्थ में माधुर्य्य का एक अंग ऐश्वर्य है क्योंकि विना माधुर्य्य के ऐश्वर्य सिद्ध ही नहीं हो सकता कारण कि जब तक कोई वस्तु ही नहीं तब ऐश्वर्य कहां से और किसका होगा और इन्हीं माधुर्य्य और ऐश्वर्य का नाम सगुण और निर्गुण ब्रह्म है इसी लिये बिना सगुण ब्रह्म के उसका ऐश्वर्य रूपी निर्गुण ब्रह्म कदापि नहीं हो सकता क्योंकि यदि माधुर्य्यान्तर्गत संसार को कल्पित मान लिया जायगा तो उससे सिद्ध किया हुआ ऐश्वर्यरूपी निर्गुण ब्रह्म भी कल्पित हो रहेगा कारण कि कल्पित व तु का परिणाम भी कल्पित रहता है यदि कहो कि कल्पित मन और संसार द्वारा ब्रह्मभाव तो प्राप्त हो जाता है तो यह सब अशुद्ध है कारण कि जिन वस्तुओं को कल्पित मान रहे हो वे सब वास्तव में अकल्पित ही हैं केवल माया के आवरण से कल्पित जान पड़तीं हैं जब पूर्ण ज्ञान द्वारा वह आवरण नष्ट हो जाता है तब ब्रह्म का माधुर्य्य भाव उत्पन्न होकर भगवत् प्राप्ति हो जाती है यदि ऐसा न माना जायगा तो यह आपत्ति होगी कि अपौरुषेय वेद की बहुत सी श्रुतियां माधुर्य्य का और बहुत ऐश्वर्य का प्रतिपादन करती हैंयथाः —

"नच वाचा न मनसा प्राप्तुं शक्यो न चक्षुषा" न विज्ञो

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

न विजानीमः" "यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसासह" "अनाद्यन्तं कलिलस्य मध्ये" "तस्य हैतस्य पुरुषस्य रूपं यथा सकृद् विद्युत्तम" "हृदा मनीषा मन साभिक्लृप्तो यं एत-द्विदुरमृतास्ते भवन्ति" इत्यादि—

तो एक ही काल में दो विरुद्ध धर्म सिद्ध नहीं हो सकते जिस काल में एक धर्म का प्रतिपादन होगा ठीक उसी काल में उसके विरुद्ध धर्म का अवश्य ही निषेध हो जायगा तथा विरुद्ध धर्म प्रतिपादन करने वाली श्रुतियां मिथ्या हो जायँगी परन्तु ऐसा हो नहीं सकता कारण कि वेद वाणी भगवत् वाक्य होने से कभी मिथ्या नहीं हो सकती अतएव भगवत् की माधुर्य्य शक्ति प्रधानतः अंगीकार करने से उस माधुर्य्य का ऐश्वर्यरूप प्रतिपादन करने वाली वेद श्रुतियां ठीक ठीक सिद्ध हो जावेंगी और कोई विरोध भी नहीं रहेगा यही युक्ति युक्त है। इति

अथ कर्म प्रकरण

श्लोक-केषां चित्प्रेम पुंसां विगलित मनसां बाल लीला विलासं केषां गोपाल लीलांकित रसिक तनुर्वेणुवाद्येन देवम्॥ केषां वामा समाजे जनित मनसिजो दैत्यदर्पापहैवं ज्ञात्वा भिन्नाभिलाषं सजयति जगता मीश्वरस्तादृशोऽभूत्॥

भूतों के उत्पन्न करने के लिये जो प्रकृति का त्याग है उसको कर्म कहते हैं श्री गीता में कहा भी है यथा-"भूत भावोद्भव करो विसर्गः कर्म्म संज्ञितः"-कर्म्म ही सृष्टि तथा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुक्ति का कारण है-प्रकृति के सम्बन्ध को क्रिया वा कर्म्म कहते हैं-बीज और वृक्ष सम्बन्ध वत् प्रकृति और क्रिया का सम्बन्ध है-ब्रह्म से अलग हुई त्रिगुण मयी प्रकृति अपने कर्म्मोत्पन्न सम्बन्ध से जीव शक्ति से मिल कर व्यक्त से व्यक्त होती है-जैसे ब्रह्म और तच्छक्तिका अभेद है उसी प्रकार ब्रह्म शक्ति प्रकृति और कर्म्म में भी भेद नहीं इसी कारण शास्त्रों ने कर्म्म को ब्रह्मस्वरूप कहा है यथा-ममैवास्तिस्वरूपंहि कर्म्म पीयूष पायिनः। वेदा वदन्ति कर्मास्ति ब्रह्मसारूप्यभागिति॥ अर्थात् सृष्टि कर्ता कर्म ही जीव प्रवाह उत्पन्न करके उसको तत्स्वरूप ब्रह्म से मिला कर मुक्त करदेता है-कर्म्म तीन प्रकार के हैं ऐश, जैव और सहज-ऐश कर्म्म वे हैं जो ईश्वर सम्बन्धीय अवतारादि में देख पड़ते हैं-जैव कर्म्म वे हैं जो जीव सम्बन्धीय हैं जिनके द्वारा जीव स्वतन्त्र होकर उन्नति करते हुए मुक्ति पद प्राप्त करता है और सहज कर्म्म प्रकृति से सम्बन्ध रखते हैं जिनसे सृष्टि का कार्य स्थावर जंगम पर्यंत होता है और जो जीव को उसके पंच (१) कोष द्वारा परतंत्रावस्था पर्य्यन्त क्रमोन्नति करते हुए चौरासी लाख योनि में भ्रमाकर मनुष्य योनि तक पहुंचा देता है जहां से फिर जीव स्वतन्त्र होकर और पाप पुण्य का अधिकारी बन कर जैव कर्म्म द्वारा मुक्ति लाभ करता है क्यों कि संस्कार जन्य शुद्धि ही से श्रेयस्पद का लाभ होता है।

---

(१) पंच कोषाः - अन्न मयकोष, प्राण मय कोष मनो मय, कोष, विज्ञान मय कोष, आनन्द मय कोष —

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शुभाशुभ जैवकर्म्म भी तीन प्रकार के होते हैं संचित, क्रियमाण और प्रारब्ध, संचित और क्रियमाण मिलकर आगामी प्रारब्ध कर्म्म बनते हैं जिनके अनुसार आगामी जन्म मिलता है और वे उसी जन्म के अन्त तक अवश्य भोगना पड़ते हैं-प्रारब्ध कर्म्म के फल कर्म्मविपाकानुसार दण्ड स्वरूप भोगना ही होंगे परन्तु उनसे इस जन्म के शुभा शुभ कर्म्म करने में कोई वाधा न पड़ेगी और यही जीव को स्वतन्त्र ता है-कर्म्म के दो भाव हैं सकाम और निष्काम-इस जन्म के शुभा शुभ सकाम कर्म्म तथा पूर्व जन्म के कुछ कर्म्म मिलकर उन्हीं के अनुसार सुख दुःख अगले जन्म में भोगना होगा और इस जन्म के निष्काम कर्म्म करने से आगामी जन्म का प्रारब्ध केवल पूर्व जन्मान्तर केवचे हुए कर्म्मों द्वारा ही वनैगा और जन्मान्तर के कर्म्म समाप्त होने पर यदि फिर सकाम कर्म्म न किये जायं तो कर्म्म बन्धन से निवृत्त होकर मोक्ष हो जायगी-यदि इस जन्म के शुभ निष्काम कर्म्मों में कर्तृत्वाभिमान, ममत्व और फलेच्छा न हो और उन कर्म्मों को निज कर्तव्य समझ कर भगवदर्पण कर देय तो प्रकृति राज्य से उल्लंघन करने तथा आध्यात्मिक राज्य में प्रवेश होने से पूर्व जन्मान्तर के वचे हुए समस्त कर्म्म जिनका अभी प्रारब्ध नहीं बना है नष्ट होकर मोक्ष हो जाती है अब यह शंका उठती है कि भगवत् वा भगवद्रूप श्री गुरुदेव के निष्कपट शरण जाने तथा धोके से भगवत् नामोच्चारण से जन्म जन्मान्तर के पाप किस प्रकार नष्ट हो जाते हैं इसका कारण यह है कि सर्व शक्तिमान्

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भगवत् तथा भगवद्रूप गुरुदेव और उस भगवत् के सर्व शक्तिमान् नाम जो अपौरुषेय मन्त्र रूप शब्द ब्रह्म से प्रकट हुए हैं उनके प्रताप से जन्म जन्मान्तर के पाप भस्म हो कर पुनः जन्म होने से मुक्त हो जाता है यथा

श्लोक– कृष्ण मन्त्रोपदेशेन माया दूर मुपागता ॥ कृपया गुरुदेवस्य द्वितीयं जन्म कथ्यते ॥ यदि कहो कि अहो रात्रि में कितने ही वेर नाम मुख से निकल जाता ही होगा व दुष्कर्म करते जायँ कभी एक देर मोक्ष हेतु नाम ले लेंगे और कभी गुरुमन्त्र भी ग्रहण कर लेंगे तो ऐसा नहीं हो सकता कारण कि ऐसा करना भगवत् तथा श्री गुरुदेव को बञ्चन करना है जिस वज़ू समान पाप से और एक बार नामोच्चारण पीछे फिर नामोच्चारण त्याग के महा पाप से कोटि जन्म में भी मुक्त नहीं हो सकता यदि कहो कि कर्म तो स्वयं जड़ है चैतन्य जीव को मोक्ष कैसे दे सकता, तो जिस प्रकार जड़रूप श्रेणी व जड़रूप जलयान (नौका) द्वारा ऊर्द्ध्वगति व सिन्धु पार हो जाते हैं तैसे ही शुभ निष्काम कर्म्म भगवदर्पण द्वारा संसार सिन्धु से पार तथा ऊर्द्ध्वगति होकर और आध्यात्म राज्य में पहुँचकर तन्निकट सम्बन्धीय भगवत् प्राप्ति हो जाती है इसमें कुछ संदेह नहीं –

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अथ उपासना प्रकरण

श्लोक–वेदानुद्धरते जगन्ति वहते भूगोल मुद्बिभ्रते। दैत्यं दारयते बलिंछलयते क्षत्रक्षयं कुर्वते ॥ पौलस्त्यं जयते हलं कलयते कारुण्य मातन्वते म्लेच्छान्मूर्च्छयते दशा कृति कृते कृष्णाय तुभ्यं नमः ॥

संसार भाव मय है अर्थात् भाव हो से समस्त संसार की उत्पत्ति है और भाव ही में स्थित तथा भाव ही में लय हो जाता है। उस सत्चिदानन्द रूप परमात्मा के आनन्द स्वरूप का सान्निध्य जिस उपाय से हो सकता है। उसको उपासना कहते हैं सो उपासना दो प्रकार की होती है एक निर्गुण और द्वितीय सगुण।

परमात्मा के तीन भाव हैं ब्रह्म, ईश्वर, और विराट। ब्रह्म भाव अनिर्वचनोय, अप्रमेय और अव्यक्त होने से वह निरूप निराकार परमात्मा चंचल-बुद्धि मनुष्य की धारणा के अन्तर्भूत नहीं हो सकता, इसी लिये महर्षियों ने उस ब्रह्म की निर्गुण मूर्ति कल्पना अतीत होने से उसकी मूर्ति को विराट मूर्ति के भाव में रख दिया है कारण कि यावन्मात्र दृश्य रूप सूक्ष्म रूप भाव का ही स्थूल रूप है यह स्वतः सिद्ध है और यही मन्त्र योग की ध्येय वस्तु है। यह कल्पना महर्षियों की समाधिगम्य कल्पना है मिथ्या मानस कल्पना नहीं है क्योंकि भगवद्भावों की कल्पना शुद्ध और सत्य ही हुआ करती है। मन के निरोध करने को जो समस्त साधनों का मुख्य कारण है एकाग्रता की

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आवश्यकता हुआ करती है और वह एकाग्रता किसी मूर्ति व स्वरूप द्वारा ही हो सकती है रूप हीन वस्तु पर नहीं, और योति व बिन्दु का ध्यान जो हठ तथा लय योग का साधन है सो भी मूर्ति तथा रूप का सूक्ष्म स्वरूप है अतएव इन योगों द्वारा मनुष्य अपने मन को एकाग्र करके राजयोग में प्रवेश करके भगवत् की आनन्द सत्ता का सान्निध्य जिससे सर्व मय बासुदेव का लक्ष्य होता है प्राप्त करता है,यही सगुणोपसना से निर्गुणोपासना का भाव है और यही निश्रेय सवा मोक्ष पद है। योग उपासना का शरीर और भक्ति उपासना का प्राण है योग से शारीरिक और मानसिक क्रिया द्वारा चित्त को शान्ति प्राप्त होता है और भक्ति द्वारा भक्त का हृदय निर्मल तथा शुद्ध होकर भगवत् सान्निध्य प्राप्त होता है जिस प्रकार बिना शरीर प्राण नहीं रहता और प्राण के विना शरीर नहीं रह सकता उसी प्रकार योग बिना भक्ति नहीं हो सकती और भक्ति बिना भगवत् सान्निध्य नहीं हो सकता और यही योग और भक्ति उपासना के दो मुख्य अंग हैं जिसके प्रमाण स्वरूप कुछ श्लोक नीचे उद्धृति किये जाते हैं यथाः—

श्रुति आत्मेत्येवो पासीत, तदात्मानमेबावेत्, तमेव विदित्वाऽति मृत्युमेतिनाऽन्यः पन्थाविद्यतेऽयनाय ॥

छान्दोग्योपनिषद्—सयथा शकुनिः सूत्रेण प्रबद्धो दिशं दिशं पतित्वाऽन्यत्रायतनम् लब्ध्वा बन्धन मेवोपश्रयत एव मेव खलु सौम्य तन्मनो दिशं दिशं पतित्वाऽन्यत्राऽऽयतनम लब्ध्वा प्राण मेवोपश्रयते प्राण बन्धनंहि सौम्य मन इति ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महर्षि वशिष्ठ जी भी कहते हैं— सर्व्वज्ञाः रुद्र गुरुर्नियो ह्यन्तर्यामी कृपा निधिः । सर्व्व सद्गुणसारात्मा दोष शून्यः परः पुमान् ॥

अथ भक्ति प्रकरण

श्लोक— क्षीराब्धौकृतसंस्तवः सुरगणैर्ब्रह्मादिभिः पंडितैः प्रादुर्भूतो वसुदेव सद्मनिमुदाचिक्रीणयोगोकुले ॥ कंसध्वंसकृते जगाम मथुरां सारामसद्वारिकां गोपालोऽखिलगोपिकाजनसुखः पायादपायात्सनः ॥

वेदश्रुति— 'सापरानुरक्तिः ईश्वरः'' परमेश्वरमें पूर्णानुराग तथा गाढ़ प्रेम होना एवं एकाग्रचित्त होकर उसी में उन्मत्त रहने को भक्ति कहते हैं सो नव प्रकार की है— श्रवण, कीर्त्तन, स्मरण, सेवा, अर्चा, वन्दन, दास्य, सख्य, आत्मनिवेदन

श्लोक प्रहलादउवाच- "श्रवणं कीर्त्तनं विष्णोः स्मरणं पाद सेवनम् । अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्य मात्म निवेदनम् ॥ इतिपुंसाऽर्पिताविष्णौ भक्तिश्चेन्नवलक्षणा । क्रियते भगवत्यद्धातन्मन्येऽधीत मुत्तमम् (भा० ५, ५; ३, २४)

यह नवधा भक्ति दो प्रकार की है एक विहित वालौकिकी द्वितीय अविहित वा अलौकिकी जो भक्ति शास्त्र विधि पूर्वक हो वह विहित और जो प्रेम की उन्मत्तता से शास्त्र ज्ञान रहित हो अर्थात् उचितानुचित कर्म का विचार नर है वह अलौकिकी है— जिस भक्ति में केवल अपने प्रीतम का आश्रय वा उसी के रूप अनूप की मधुर लावण्यता पान करने

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

में हृदय नेत्र छकित रहकर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में वही दृष्टिगोचर हो उसको अनन्य वा अनपायनी भक्ति कहते हैं—

तीन प्रकार के योग अर्थात् ज्ञान, कर्म और भक्ति योगों में प्रथम ज्ञान होने से कर्म करने में रुचि होती है सत्य कर्म करते करते ईश्वर, माया, तथा निजस्वरूप जीव का यथार्थ विज्ञान होने से ईश्वर में प्रीति उत्पन्न होती है उसी प्रीति की दृढ़ता को भक्ति कहते हैं अतएव भक्ति योग सबसे परे है क्यों कि केवल ईश्वर के ज्ञान मात्र से काम नहीं चलता जबतक उसमें प्रीति न हो तथा कीर्त्तन सेव वन्दनादि से फलेच्छा रहित होकर अपना कर्तव्य पालन करते हुए उसको प्रसन्न न करै यथा राजा के ज्ञान मात्र से कार्य की सिद्धि नहीं होती जब तक राजा की आज्ञा मान कर उसकी सेवा बन्दनादि से उसको संतुष्ट न करै अतएव ज्ञान वैराग्य तथा कर्म साधन रूप हैं और भक्ति साध्य है भगवत् ने कहा भी है यथा—श्लोक— अलंव्रतैरलं तीर्थै रलं योगै रलं मखै । अलंज्ञान कथा लापैर्भक्ति रेकैव मुक्तिदा (१) अनिमित्ता भागवती भक्तिः सिद्धेर्गरीयसी । जरयत्याशुया कोशं निगीर्णमनलोयथा ॥ सालोक्य सार्ष्टिसामीप्य सारूप्यैकत्वमप्युत । दीयमानं न गृह्णन्ति विना मत्सेवनंजनाः ॥ दयास्ति सर्व भूतेषु सर्वं कृष्ण मयं जगत् । यो जानाति महा ज्ञानी सभक्तो वैष्णवोत्तमः ॥ ध्यायतेऽहर्निशं धर्मी समे ज्ञाने हरिं मुदा । महान् जितेन्द्रियः शांतो विष्णु व्रत परायणः ॥ भक्तानांत्रिविधानांच लक्षणं श्रयतामिति । गुणशय्या रतोभक्तो

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मन्नामगुणकीर्तिषु ॥ मनोनिवेशयेत् त्यक्त्वासंसारं सुखकारणम् । ध्यायते मत्पदाब्जंच पूजयेद्भक्ति भावतः । पुत्रादपि परः स्नेहो मयि येषां निरन्तरम् गृहाद्याश्चमयिन्यस्तास्ते नरा वैष्णवोत्तमाः । इतिश्री ब्रह्मवैवर्त्तपुराणे—श्रीभगवद्गीता में भी कहा है यथा—अपिचेत्सुदुराचारो भजतेमामनन्य भाक् साधुरेवसमन्तव्यः सम्यग्व्यवसितोहिसः ॥ क्षिप्रंभवति धर्मात्माशश्वच्छान्ति निगच्छति । कौन्तेयप्रतिजानीहि नमेभक्तः प्रणश्यति ॥ [अ० ९ ३०, ३१] फिर भी कहा है मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय । निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः । (अ० १२ ८) मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मांनमस्कुरु । मामेवैष्यसि सत्यंते प्रतिजाने प्रियोऽसिमे । सर्वं धर्मानपरित्यज्य मामेकं शरणं व्रज । अहं त्वां सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः (अ० १८ ६५, ६६)—

बृहन्नारदीय में भी है यथा मन्मानसाश्चमद्भक्तामद्भक्तजन लोलुपाः । मन्नामश्रवणोत्कास्तेवै भागवतोत्तमाः ॥ येऽभिनन्दन्ति नामानि हरेः शृण्वन्ति हर्षिताः । रोमाञ्चित शरीराश्चतेवै भागवतोत्तमाः । अन्येषामुदयं दृष्ट्वा येऽभिनन्दन्तिमानवाः । हरिनामपराः येचतेवैभागवतोत्तमाः ॥ ऊपर कही भई अनपायनी भक्ति जब परा काष्ठा को पहुँचजाती है तब वह प्रेमा भक्ति कहाती है अब प्रेम क्या वस्तु है सो आगे कहा जाता है। प्रेम की व्यवस्था करने से पहले उसके मूल सिद्धान्त पर विचार करना उचित है—कोई कार्य्य विना कारण के नहीं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हो सक्ता—परमात्मा श्रीकृष्ण की अचिन्त्य शक्ति तीन स्वरूपों में विभक्त है एक वहिरंगा अर्थात् सदंशिनी सत् वा प्रकृति जो सृष्टि को नियमित रूप से रचयिता है दूसरी अन्तरंगा आनन्द वा आह्लादिनी शक्ति है जिसके द्वारा भगवदिच्छानुसार कार्य्य हुआ करते हैं और तीसरी तटस्था अर्थात् जीव वा चित् शक्ति जिसके द्वारा आह्लादिनी तथा सदंशिनी शक्तियों का आविर्भाव हुआ करता है—अब प्रेम जो भगवत् की आह्लादिनी शक्ति द्वारा प्रकट होता है दो प्रकार का है एक विशुद्ध वा विशद प्रेम जो केवल आह्लादिनी शक्ति से सम्पर्क रखता है और जिसका सम्बन्ध जीवगण के आध्यात्मिक राज्य से है दूसरा वैषयिक वा प्राकृतिक प्रेम जो आह्लादिनी और प्राकृतिकशक्ति का संयोजित स्वरूप है—विशुद्ध आह्लादिनी शक्ति का स्वरूप श्री राधा जी हैं—वैषयिक वा प्राकृतिक प्रेम सत्वादि गुण भेद से तीन प्रकार का है इन में संपूर्ण भक्तों तथा अन्य जीवों के प्रेम की गणना है—जिस अपनी आह्लादिनी शक्ति का आश्रय लेकर परमात्मा श्री कृष्ण आनन्द शक्ति स्वरूपणी श्रीराधाजी में बिहार करते हैं उस विशुद्ध प्रेम रस के आस्वादन करने को आध्यात्मिक राज्य द्वारा श्रीराधा जी का आश्रय अवश्य लेना होगा यही सिद्धान्त है और इसी को विशद प्रेम कहते हैं—गोपिकाओं का वैषयिक प्रेम ईश्वर प्रति होने से उसको परम कृपा द्वारा विशुद्ध प्रेम में परिणत होजाना प्रमाणित करता है कि किसी भी भाव से उस समर्थ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ईश्वर का भजन करना मोक्षप्रद होता है स्वयं भगवत् ने हो कहा है यथा—न तपो भिर्नवेदैश्च नज्ञानेनापि कर्मणा वशो स्मि केवलं प्रेम्णाप्रमाणं तत्र गोपिकाः॥ अर्थात् तप, ज्ञान वेदाध्ययनादि कर्म मुझको वश नहीं करसक्ते जबतक उन के मूल में प्रेम न हो अतएव केवल प्रेम से ही वश में होता हूँ—

विज्ञान के नियमानुसार जड़ और चेतन दो प्रकार के तत्वों में एक ऐसी प्रक्रिया है कि जिस के कारण प्रत्येक तत्व का अंश अपने अंशो की ओर सदा आकर्षित होता रहता है—जड़ तत्व की ओर आकर्षित होने की प्रक्रिया को आकर्षण और चैतन्य तत्व को ओर आकर्षित होने की प्रक्रिया को प्रेम कहते हैं यह प्रेम एक वस्तु को अपना आश्रय और अन्य वस्तु को अपना विषय बनाता है—चैतन्यांशजोव इसका आश्रय और चैतन्य राशि भगवान् इसके विषय हैं - जीवका स्वरूपेण स्वाभाविक धर्म प्रेम है—धर्म दो प्रकार का है एक स्वाभाविक द्वितोय सांवंधिक जैसे जल का स्वाभाविक धर्म शीतलता, और ऊष्णता उसका सांवंधिक धर्म है—जीव जबतक अपने चिदानन्दांश में अवस्थित रहता है तब तक उसका स्वाभाविक धर्म है और जब माया के संबन्ध से सांसारिक विषयों में लिप्त होकर सांवंधिक धर्म में अवस्थित होजाता है तभी उसकी दुर्दशा होती है जिससे मुक्त होने को उसे अपने स्वाभाविक धर्म प्रेमकी ओर आने से उसका कल्याण होता है जैसे क्षुधा का संवंध न होने से कोई उत्तम पदार्थ नहीं रुचता

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इसो प्रकार जड़त्व आकर्षण न होने से स्वाभाविक प्रेम की प्रक्रिया अवश्य होगी जिसका स्रोत चिदानन्द की ओर होने से अपने चिदानन्दांशी भगवत् स्वरूप का सान्निध्यप्राप्त होता है। यह किसी सुकृत वा पुण्य का फल नहीं किन्तु आन्तरिक अनुराग से ही प्राप्त होता है।

गोपी निगूढ़ प्रम

यह जानने को सभी उत्सुक रहते हैं कि नट राज पर तत्व श्रीकृष्ण की सृष्टि रचना का हेतु क्या है—हेतु जानने को ही नहीं किन्तु उस के दृश्य देखने को भी लालायित रहते हैं-- सच्चिदानन्द श्रीकृष्ण की तीन मुख्य शक्तियां है सदंशिनी, चिदंशिनी और आह्लादिनी (आनन्द) और इन्हीं के अन्तर्गत अन्य समस्त अनन्त शक्तियां हैं--मन्मथ के भी मन्मथ स्वरूप स्वतन्त्र परमात्मा श्रीकृष्ण जब अपने नाट्य तथा आनन्द रस का आस्वादन करने की इच्छा करते हैं तब इस नाट्य शाला जगत् की रचना किया करते हैं और उसमें अपनी आह्लादिनी शक्ति द्वारा एक ओर जिस प्रकार समस्त जीवों को प्राकृत जगत् में उस नाट्यका निरीक्षण कराते हैं दूसरी ओर उसी प्रकार शृंगार रस मूर्ति अप्राकृत् श्रीवृन्दावन भूमि * में अपनी

---

* श्लोक - आसा महो चरण रेणु जुषा महंस्यां वृन्दावने किमपिगुल्मलतौषधीनाम् । या दुस्त्यजं स्वजन मार्य्यं पथञ्च हित्वा भेजुर्मुकुन्द पदवीं श्रुति भिर्विमृग्याम् ॥ (भा० १०-४७-६१) यदि भगवद्रूप श्रीवृन्दावन श्री ब्रह्मा की सृष्टि में होता तो वह कदापि ऐसी आसा न करते—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रेमस्वरूपा श्रीराधिका के साथ रमण करके स्वयं उस निज स्वरूप रस का नित्य आस्वादन किया करते हैं और प्रेम की वाहुल्यता से चार नेत्रों से तृप्त न होकर उस नाट्य शाला की सहायक कोटि कोटि गोपांगनाओं प्रति उतने ही स्वरूप धारण करके क्रीड़ा किया करते हैं इसी का नाम महारास है, परस्पर के अवलोकन से इसका ह्रास कदापि नहीं होता किन्तु अव गाहन ही हुआ करता है और इसी लिये इसको नित्य, अनन्त और महारास कहते हैं यद्यपि वह कृष्ण अनन्त है और उसकी लीला भी अनन्त और असीम है तथापि अपने भक्तों के उद्धारार्थ अपने आनन्द रस के वाहुल्य को अवलोकन कराना उसकी उदारता और कृपा है और यह वाहुल्य विना दो स्वरूप धारण किये नहीं हो सकता और ऐसा नाट्य भी अनन्त तथा असीम भूमि श्रीवृन्दावन में ही होसकता है जिस आन्तरिक नाट्य के अवलोकनार्थ मनो भाव को भी निस्त्रैगुण्य बना कर दिव्य चक्षु तथा दिव्य दृष्टि सम्पन्न करना होगा। आनन्द शक्ति का सार चिन्मय प्रेम है जो कृष्ण को प्रेम और देह विभावित प्रेयसी श्रेष्टा है यही चिन्ता मणि स्वरूपा श्रेष्टा कृष्णवाञ्छा पूर्ण करने हारी है सोई महाभाव श्री राधा का स्वरूप है और जिस प्रकार श्री कृष्ण की प्रेम कल्पलता श्री राधा का स्वरूप है उसी प्रकार गोपीगण उस कल्प वृक्ष के पल्लव तथा पत्र हैं। इन गोपीगणों की अभिलाषा स्वयं श्री कृष्ण संग निजें-द्रिय सुख हेतु रमण करने की नहीं वरन वे उत्साह सहित

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्री कृष्ण को सुख देने तथा श्री राधाकृष्ण की क्रीड़ा में सहायता देने को इच्छुक रहती हैं यही श्री राधाकृष्ण का विहार है और गोपी गण उसकी सहायक रूपा सामिग्री हैं जिस के देखने को प्रथम कारुरायामृत, पुनः तारुरायामृत तत्पश्चात् लावरायामृत में स्नान करि गोपी भाव अंगीकार करने से उज्वल प्रेमाभृतास्वादन मिलता है और यही गोपी निगूढ़ प्रेम है ! यथा भगवद्वाक्यं अर्जुन प्रति आदि पुराणे

श्लोक— मन्माहात्म्यं मत्सपर्य्यां मच्छ्रद्धां मन्मनोगतम् । जानन्ति गोपिकाः पार्थ ! नान्ये जानन्ति मर्मणि ॥ निजाङ्गमपिया गोप्यो ममेति समुपासते । ताभ्यः परं नमे पार्थ ! निगूढ़ प्रेम भाजनम् ॥ इति

स्वकीया परकीया भावाः

भाव मय जगत में स्वतन्त्र परमात्मा श्रीकृष्ण के, अपनी आल्हादिनी शक्तिस्वरूपणी राधा के साथ विहार करने में महानुभावों के दो भाव हैं एक स्वकीय (निजस्त्री) और दूसरा परकीय (परस्त्री) यद्यपि स्वकीयभाव का प्रमाण कोई कोई महानुभाव श्री गर्ग संहिता तथा श्री ब्रह्म वैवर्त्त पुराणांतर्गत कृष्ण खंड के अनुसार भांडीर वन में श्री ब्रह्मा द्वारा गुप्त विवाह होने का देते हैं किन्तु श्रीराधा के संग भगवत् का नित्य विहार अप्राकृतिक आध्यात्मिक विषय है और नित्य विहारस्थान श्री वृन्दावन भी प्रकृति से परे तथा दिव्य है जो भगवदाज्ञानुसार श्रीगोलोक से भूतल में आयाहै श्रीराधा में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्वीकीया वा परकीया भावसे रमण करना श्रीरुक्मिणी इत्यादि के प्राकृतिक भाव सदृश नहीं है किन्तु उस पूर्ण तम परमात्मा श्रीकृष्ण की निजानन्द स्वरूपणी श्री राधा के साथ स्वतन्त्र रूप से रमण करना है और वह गुप्त विवाह भी केवल एक लीलामात्र अन्य लीला सदृश है और स्वकीया भावद्वारा श्रृंगार रस के सम्पूर्ण अंग प्रति अंग घटित होने से परकीया भाव का ही महत्व कहागया है और श्रृंगार रस के भावानुभावादि पर विचार करने से कुछ ज्ञात होसकता है वा श्री राधा जी की कृपा से अनुभव में आसकता है—यह पहिले ही कहा गया है कि परकीया भाव अप्राकृतिक होने से वैषयिक प्रेम नहीं है किन्तु यह केवल रसिक भक्तों को पूर्ण विशुद्ध प्रेमामृतास्वादन कराने को उद्दीपन सदृश है जैसे कोई कहै कि अमुक मनुष्य किसी अन्य मनुष्य के बालक का लालन पालन पुत्र वत् करता है इसमें उस मनुष्य के पुत्र सदृश लालन पालन भाव का ही उत्कर्ष है उसके सम्बन्ध का नहीं ठीक इसी प्रकार परकीया भाव में भी केवल भाव का ही उत्कर्ष समझना उचित है किसी शास्त्रीय सम्बन्ध का नहीं ।

अथ गो लोक व्याख्या

गौर्ज्योतिर्मयः पुरुष इत्यर्थस्तस्य लोकः स्थानम्

अर्थात् ज्योतिर्मय पुरुष का लोक व स्थान · यथा तंत्रे—
श्लोक—शुद्ध तत्व मयं देवि नाना देवैश्च शोभितम् । मध्य देशे गोलोकाख्यं श्री विष्णोर्लोभ मन्दिरम् ॥ श्री पाद्मे—यह लोक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विस्तार में लक्ष कोटि योजन का है, चन्द्र मंडल के समान वर्तुलाकार है वैकुण्ठ से भी परे है गोप और गोपियों से संयुक्त है कल्पवृक्ष से समन्वित और रास मंडल से सुशोभित है यहीं श्रीवृन्दावन है यहीं श्री कृष्ण परब्रह्म का स्थान है। रत्न सिंहासन पर यहीं ईश्वर विराजमान हैं। यह धाम नाना प्रकार के अप्राकृत भोगों से परिपूर्ण है। यही अमृत पद है जिसका वर्णन उपनिषदों में पाया जाता है। यहीं ब्रह्मानन्द का सुख प्राप्त होता है। यहाँ आकर जीव च्युत नहीं होता, अनन्य भक्ति द्वारा ही इस शाश्वत और दिव्य धाम की प्राप्ति होती है वेदाध्ययन, यज्ञ, व्रत, तप, जपादि नाना साधन इस फल के देने में असमर्थ हैं।

अब प्रेम सम्बन्धीय कुछ महानुभावों के वाक्य उद्धृत किये जाते हैं :—

ईश्वरपुरी श्री पादानां—नृत्यन्वायु विघूर्णितैः स्वविटपैर्गायन्न लीनांरुतैर्मुंचन्नश्रुमरंद बिन्दुभिरलं रोमांचवानं कुरैः। माकंदोपि मुकुन्द मूर्छति तवस्मृत्यातु वृन्दावने ब्रूहिप्राण समान चेतसि कथं नामापि नायातिते ॥

शंकरस्य—नध्यातोसिनकीर्तितोसिनमना गाराधितोसिप्रभो नाजन्मांतर गोचरे तवपदां भोजेच भक्तिःकृता। तेनाहं बहु दुःख भाजनतया प्राप्तो दशामी दृशींत्वंकारुण्य निधे बिधेहि करुणां श्रीकृष्ण दीनेमयि ॥

ईश्वरपुरी पादानां—धन्यानां हृदि भासतां गिरिवर प्रत्यग्र

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कुंजौकसां सत्यानन्द रसं विकार विभव व्यावृत्त मंतर्महः। अस्माकं किल बल्लवीरति रसो वृन्दाटवी लालसो गोपः कोपि महेन्द्र नील रुचिरश्चित्ते मुहुः क्रीड़तु ॥

श्री माधवेन्द्रपुरी पादनां—संध्या वंदन भद्र मस्तु भवते भोः स्नान तुभ्यं नमो भो देवाः पितरश्चतर्पण विधौनाहं क्षमः क्षम्यतां। यत्रक्वापि निषद्य यादव कुलोत्तंसस्य कंसद्विषः स्मारं स्मार मघं हरामित दलं मन्येकि मन्ये नमे ॥

भक्तानां महात्म्यं।

प्रह्लाद नारद पाराशर पुंडरीक व्यासांवरीष शुक शौनक भीष्म दाल्भ्यां। रुक्मांगदोद्धव विभीषण फाल्गुनादी न्पुण्या-निमान्परम भागवतान्नमामि ॥ १ ॥ श्री विष्णोःश्रवणे परीक्षिद भवद्वैयासकिःकीर्त्तने प्रह्लाद स्मरणे तदंघ्रि भजने लक्ष्मीःप्रथुः पूजने। अक्रूरस्त्वभिवंदने कपि पतिर्दास्येऽथ सख्येऽर्जुनः सर्वस्वात्म निवेदने बलिर भूत्कृष्णाप्तिरेषां परम् ॥ २ ॥ त्वद्भक्तःसरितां पतिं चुलुक वत्खद्योतवद्भास्करं मेरुं पश्यति लोष्टवत्किम परं भूमेःपतिं भृत्यवत्। चिन्ता रत्नचयं शिला शकलवत्कल्पद्रुमं काष्ठवत्संसारं तृणराशिवत्किम परं देहं निजं भारवत् ॥ ३ ॥ प्रार्थयेद्वैष्णवस्यान्नं प्रयत्नेन विचक्षणः। सर्व पाप विशुद्धयर्थं तदभावे जलं पिवेत् ॥ ४ ॥

अथरस सिद्धान्त।

श्लोक—मुग्धंमां निगदंतु नीति निपुणा भ्रांतं मुहुर्वै दिकाः मंदं बांधव संचया जड़धियंमुक्तादराः सोदराः। उन्मत्त

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धनिनो विवेकचतुराः कामं महा दांभिकं मोक्तुं नत्तमते मनागपि मनो गोविंद पादस्पृहां॥

वेद श्रुति "रसो वैसः" वह परमात्मा रस रूप है श्री गीता में भी भगवान् ने कहा है श्लोक-गामा विश्यच भूतानि धारयाम्यह मोजसा पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः। (गी० अ० १५-१३)

रस—किसी बस्तु के आधार को उसका रस कहते हैं जैसे अग्नि का आधार ऊष्णत्व, जल का आधार शीतत्व सृष्टि का आधार माया और माया तथा जीव का आधार ब्रह्म है। उसी रस को विद्वानों ने "एकोहं बहुस्याम" वेद श्रुति के आधार पर नव रसों में विभक्त किया है यथा शृंगार वा माधुर्य्य, हास्य, अद्भुत, करुण, शांत, वीर, बीभत्स, रौद्र और भयानक परंतु वैष्णव महानुभावों ने प्राथमिक पांच रसों को जो भगवत् प्राप्ति के प्रधान कारण हैं मुख्य माना है और उन पांचों में भी केवल शृंगार वा माधुर्य्य को ही सर्व श्रेष्ठ कहा है और अन्य चार रस उस शृंगार के अन्तर गत हैं कारण कि बिना किसी भगवद्रूप-माधुर्य्य के हास्य करुण, शान्तादि रस उत्पन्न ही नहीं हो सक्ते—

शृंगार—किसी वस्तु के गुण और रूप माधुर्य्य को उस वस्तु का शृंगार कहते हैं और उसी माधुर्य्य प्रकट करने को शृंगार रस के चार भेद कहे गये हैं यथा विभाव, अनुभाव, सात्विक और व्यभिचारी-विभाव—रस के प्रकट होने के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कारण को भाव कहते हैं सो दो प्रकार का है एक आलम्बन द्वितीय उद्दीपन आलम्बन के भी दो भेद हैं अर्थात् आश्रयालम्बन, और विषयालम्बन आश्रयालम्बन वह है कि जिस स्थान से रस उत्पन्न हो अर्थात् ध्यान करने वाला भक्त-विषयालम्बन अर्थात् स्वयंरस जिसका ध्यान किया जाय भगवत्।

उद्दीपन अर्थात् जिसके द्वारा रस उत्पन्न हो सो चार प्रकार का है एक गुण अर्थात् रूप, नवयौवनता, प्रिय भाषण इत्यादि द्वितीय चेष्टा अर्थात् बानिक तृतीय अलंकार अर्थात् वस्त्राभूषण इत्यादि और चतुर्थ तटस्थ अर्थात् पुष्प, सुगंध इत्यादि। अनुभाव—भगवत् और भक्त के परस्पर सम्मिलन समय भक्त में जो रस प्रकट हो उसको अनुभाव कहते हैं।

सात्विक—सर्व रसों में एक ही वृत्ति के होने को सात्विक कहते हैं। व्यभिचारी—जिस वृत्ति का एक रससे दूसरे रसमें परिवर्तन होजाय यथा रोनेके पीछे हँस पड़ना इसको व्यभिचारी कहते हैं भाव तथा अनुभाव में आठ वृत्तियां उत्पन्न होती हैं एक स्तंभ अर्थात् जिस दशा में हो उसी दशा में रहजाना, द्वितीय प्रलय अर्थात् अचेत हो जाना, तृतीयरोमाञ्च अर्थात् शरीर पर रोमाँच हो आना, चतुर्थ स्वेद अर्थात् शरीर पर पसीना आजाना, पंचम विवर्ण अर्थात् मुख के रंग का परिवर्तन, षठकम्प अर्थात् शरीर कम्पन, सप्तम् अश्रु अर्थात् अश्रुपात होना और अष्टम स्वर भग्न अर्थात् वाणीपरिवर्तन—किसी भावद्वारा चित्त की तदाकार वृत्ति को उस भाव का

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्थायी भाव कहते हैं अर्थात् वह चित्त वृत्ति जो अपने सजातीय तथा विजातीय भाव से विचलित न हो और उसी का नाम तन्मयता है जो केवल रसों ही द्वारा भक्त को प्राप्त होना संभव है और इसी द्वारा भगवत् प्राप्ति हो सकती है अन्य किसी प्रकार नहीं अतएव भक्ति सहित भगवत् भजनही सार है महानुभावोंने कहा भी है यथा—व्याधस्याचरणं ध्रुवस्य चवयो विद्या गजेंद्रस्यका कुब्जायाः किन्नाम रूप मधिकं कितत्सुदाम्नो धनं ॥ वंशः को विदुरस्य यादवपते रुग्रस्य किं पौरुषं भक्त्या-तुष्यति केवलं नच गुणैर्भक्तिप्रियो माधवः॥ १॥काषायान्नच भाजनादि नियमान्नो वाचने वासतो व्याख्यानादथवा मुनि व्रतभराच्चित्तोद्भवः क्षीयते ॥ किंतुस्फीत कलिन्द शैलतनया तीरेषु-विक्रीड़तो गोविन्दस्य पदारविन्द भजना रंभस्य लेशादपि ॥ २ ॥

श्री मदीश्वर पुरीपादानाम्—योगश्रुत्युपपत्ति निर्जन बन ध्यानाध्व संभावित स्वाराज्यं प्रतिपद्य निर्भय मर्मी मुक्ता भवंतु द्विजाः ॥ अस्माकंतुकदम्ब कुंज कुहरप्रोन्मील दिन्दीवर श्याम-श्यामल नाम धाम जपतां जन्मास्तु लक्षावधि ॥ ३ ॥

श्री लक्ष्मी धराणाम् -श्री रामेति जनार्दनेतिजगतां नाथेति नारायणे त्यानंदेति दयापरेति कमलाकांतेति कृष्णेतिच । श्री मन्नाम महा मृताब्धि लहरी कल्लोल मग्नं मुहुर्मुह्यं तं गलद-श्रुनेत्र मवशं मां नाथ नित्यं कुरु ४ ॥ श्री नारद पंचरात्रे--तद्दिनं दुर्दिनं मन्ये मेघाछन्नं न दुर्दिनम् । दुर्दिनं कृष्ण संलाप कथा पीयूषवर्जितम् ॥

इति भक्ति प्रकरण समाप्तं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अथ ज्ञान प्रकरण

कस्तूरी तिलकं ललाट पटले वक्षःस्थले कौस्तुभं, नासाग्रे वर मौक्तिकंकर तले वेणः करे कंकणं । सर्वांगे हरिचन्दनं सुललितं कण्ठेच मुक्तावलिःगोपत्नी परि वेष्टितो विजयते गोपाल चूड़ामणिः ।

भगवतस्वरूप तथा अपने जीवस्वरूप और माया के स्वरूप को यथार्थ जानने का नाम ज्ञान है और तिन ज्ञात स्वरूपों का निश्चयात्मिका बुद्धि द्वारा स्थायी भाव विज्ञान है - किसी ज्ञात वस्तु में निश्चय करने से पहिले तिस वस्तु में प्रीति वा भक्ति उत्पन्न होना आवश्यक और स्वाभाविक ही है विना भक्ति के ज्ञात वस्तु की प्राप्ति हो ही नहीं सक्ती और विना भगवत् प्राप्ति के मोक्ष होना भी असम्भव है अत एव ज्ञान विज्ञान तथा कर्म के मूल में भगवद्भक्ति ही है और सूत्र भी है "ऋते ज्ञाना न्नमुक्ति :" अर्थात् विना स्वरूप ज्ञान के उस ज्ञात स्वरूप में भक्ति वा प्रेम हुए विना मुक्ति हो नहीं सक्ती अव मुक्ति का स्वरूप क्या है सो आगे लिखा जावेगा--यह सिद्ध कर चुके हैं कि माधुर्य्य के विना ऐश्वर्य्य नहीं हो सक्ता इस लिये उस माधुर्य्य अर्थात् भगवत् स्वरूप के यथार्थं जान लेने को ही परमज्ञान कहा है और उस जानी भई वस्तु की भक्ति द्वारा प्राप्ति मोक्ष है यदि कहो कि ऊपर लिखे सूत्रसे ज्ञान ही द्वारा मुक्ति कही गई है भक्तिद्वारा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नहीं सो ठीक नहीं कारण कि निर्विकल्प समाधि तथा अवधूत और परमहंस दशा में तो ज्ञान नष्ट होजाता है और भक्ति ही द्वारा आत्म साक्षात्कार होकर मुक्ति होती है। यदि कहो कि भक्ति भी उक्त दशा में नहीं रहती तो ऐसा नहीं हो सक्ता क्यों कि कोई स्वरूप ही किसी स्वरुप का आनन्दास्वादन कर सक्ता है नीरूप नीरूप का आनन्द कदापि नहीं ले सक्ता और आनन्द भी भगवत् की आनन्दशक्ति से सम्बन्ध रखता है कुछ सत्यता वा ऐश्वर्य्य से नहीं तथा आनन्दास्वादन के लिये अप्राकृत मन और बुद्धि का भी होना आवश्यक है इन सब कारणों से विवश मानना होगा कि ज्ञान साधन द्वारा ज्ञाना भक्ति होने से भगवत् रूप का सक्षात्कार हो कर ब्रह्मानन्द वा मुक्ति होती है। भगवत् भक्ति जो मुक्तिका निरादर कर भक्ति ही से भगवत् प्राप्ति मानते हैं सो ठीक ही है कारण कि जब प्रेमा भक्ति का उदय होता है तब भगवत् स्वरूप में तन्मय होने से भगवत् स्वरूप के माधुर्य्य रसास्वादन में निमग्न हो जाना ही भगवत् प्राप्ति है और तभी समस्त उपायों तथा साधनों का फल स्वरूप भगवत् प्राप्ति का आनन्द प्राप्त होता है किन्तु सायुज्य मुक्ति में साधक तथा फल का आनन्द दोनों ब्रह्म में लीन होने से लोप हो जाते हैं इसी कारण से मुक्ति का निरादर किया जाता है। यदि कहो कि मुक्ति केवल माया बन्धन से छूटने का नाम है तो भगवद् भक्त श्री गुरुदेव कृपा से उसी समय माया बन्धन से निवृत्त हो जाता है जिस समय वह भगवत् सन्मुख होता है, कारण कि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

माया तो भगवदाधीन है तब भगवत् शरण आये भए का कुछ भी बिगाड़ नहीं कर सक्ती और वह भक्त प्रेमा भक्तिद्वारा भगवत् को समस्त ब्रह्माण्ड के कण कण में देखता हुआ माया के शिर पर भी पाउँ धर कर भगवत् को प्राप्त हो जाता है इसमें किंचित संदेह नहीं कहा भी है यथाभक्ति प्रकरण में लिखा भया श्लोक–व्याधस्या चरणं इत्यादि।

मुक्तिस्वरूप

जीव के शरीरान्त होने पर अपने शुभ कर्म (निष्काम कर्म) द्वारा लिंग शरीर (तत्व रचित अर्थात् तत्व रूप शरीर धारण करके समस्त लोकों से पूजित होता हुआ सत्य प्रकाश रूपी विरजा नाम नदी में श्नान कर के दिव्य रूप से परमेश्वर अपने इष्टदेव के समीप वास करने का, वा उसकी सेवा करने का, वा उसके दिव्य क्रीट कुण्डलादि रूप हो जाने का, वा उसी का स्वरूप धारण करने का, वा उसके स्वरूप में लय (तन्मय) हो जाने का आनन्द प्राप्त होना तथा जन्म मरण के बन्धन से निवृत्त होना मुक्ति वा मोक्ष कहाता है मुक्ति चार प्रकार की है सालोक्य, सारूप्य, सामीप्य और सायुज्य।

इति

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अथ वर्ण व्यवस्था

श्लोक—भास्वान् यथात्म शकलेषु निजेषु तेजः स्वोयंकियत्प्रकट यत्यपि तद्वदत्र । ब्रह्माय एव जग दंड विधान कर्त्ता गोविन्दमादि पुरुषंत महं भजामि ॥

त्रिगुणात्मिका सृष्टि में सम्पूर्ण स्थावर जंगम गुण भेद से उत्तम मध्यम और निकृष्ट इन तीन श्रेणियों में विभक्त हैं सृष्टिस्थ प्रत्येक जीव के शरीर का अस्तित्व उसके कर्म पर निर्भर है अर्थात् कार्यानुसार जन्म मिलता है और जीव का जन्म उसके पूर्व कर्मानुसार जिस योनि के वर्ण में होता है उसके शरीर नष्ट होने तक उसी वर्ण में रहता है और कर्मानुसार उसका परिवर्तन द्वितीय जन्म में हुआ करता है भलें ही वह अपने उत्तम वा नीच कर्म से उत्तम वा पतित कहा जाय किन्तु जिस प्रकार अग्नि राख से अच्छादित होने पर एवं कुछ तेज हत हो जाने पर भी तेज शून्य नहीं हो जाता इसी प्रकार जीव के उत्तम वा नीच कर्म से उसका तेज हत हो जाने पर वर्ण परिवर्तन नहीं होता दूर क्यों जाइये अपने शरीर पर ही दृष्टि पात करने से ज्ञात होगा कि एक ही प्रकार के माँस, हाड़ तथा चाम से बने होने पर भी उत्तम, मध्यम और निकृष्ट अंग कहलाते हैं हाथ से छूने पर जो वस्तु शुद्ध रहती है पाउँ के स्पर्श से अशुद्ध हो जाती है अब एक प्रश्न यह हो सकता है कि अनेक जीव अपने उत्तम कर्मद्वारा पूजनीय महात्मा कहलाते हैं सो इसका समाधान यह है कि कर्म भी पारमर्थिक एवं लौकिक अर्थात् सकाम

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

और निष्काम भेद से दो प्रकार के होते हैं पारमर्थिक कर्मों की गति उस परमात्मा की ओर होती है जो कर्म बन्धन तथा प्राकृतिक नियमों से रहित है तब उसमें जीव के चित्त की वृत्तियों के संयोग से वर्ण तथा उसके सब कर्म उनके फलेच्छा रहित होने से क्यों नष्ट न हो जायँगे परन्तु लौकिक वा सकाम कर्म द्वारा शरीरान्त होने तक वर्ण परिवर्तन होना असम्भव है यदि हठात् किया जावेगा तो उसका परिणाम यह होगा कि आगे को खच्चर तथा कलमी वृक्ष के समान न उन्नति होगी और न बंशवृद्धि –यद्यपि राजर्षि बिश्वामित्र हठात्क्षत्रिय से ब्राह्मण कहाने लगे परन्तु जब उनके जन्म की ओर दृष्टि डाली जायगी तब वह अपने ब्रह्म कहलाये जानेवाले सकाम पुरुषार्थ से राजर्षि ही माने जायँगे अतएव जीविका वर्ण उसके शरीरान्त तक उसी वर्ण में रहता है जिस वर्ण में उसको कर्मानुसार जन्म मिला है भगवान् ने भी श्रीगीता जीमें कहा है यथा
" चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुण कर्म विभागशः " (४–१३)

सूक्ष्म दृष्टा को काष्टादिक में भी चारों वर्ण दीख पड़ते हैं

अथ नामरूप

शरीरस्थ जीवों के ज्ञानार्थ प्राकृतिक किसी वस्तु के नाम रूप की कल्पना आवश्यक ही है ऐसी कल्पना का सदा समय समय पर परिवर्त्तन हुआ करता है कारण कि माया वा प्रकृति का कार्य स्वरूप संसार परिवर्तनशील है किन्तु ऐसे परिवर्तन से उसके वास्तविक स्वरूप वा तत्व का विनाश कभी नहीं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

होता क्योंकि माया सत्य है दृष्टान्त स्वरूप गन्ने को लीजिये जिसके नाम रूप तथा गुण का परिवर्तन होकर रस, खाँड और गुड़ इत्यादि बन जाते हैं किन्तु गन्ने के पार्थिविक तत्व का विनाश नहीं होता घटादि के परिवर्तन में मृतिका का बिनाश नहीं होता यह तो हुआ प्राकृतिक पदार्थ जो अप्राकृतिक पदार्थ में घटित नहीं हो सकता प्रकृति से परे परमात्मा स्वतंत्र और एक रस है अतएव उसके नाम, रूप, गुण, लीला और धाम भी अप्राकृतिक, दिव्य तथा नित्य हैं और जैसे परमात्मा सर्व शक्ति सम्पन्न है उसी प्रकार उसके नाम रूप गुणादि का भी सर्व शक्ति सम्पन्न होना स्वयंसिद्ध है और उनके द्वारा किसी विचित्र कार्य का होना वैचित्री न्याय से कुछ कठिन तथा असम्भव नहीं।

इति

अथ शौच प्रकरण

श्लोक आनन्द चिन्मय रसाल तयामनः सुयः प्राणिनां प्रति फलं स्मरता मुपेतः। लीला यितेन भुवनानि भजत्यजस्रं गोविन्द मादि पुरुषंतमहं भजामि ॥

प्रत्येक मनुष्य शरीरधारी जीव के तीन शरीर शास्त्रों ने बताये हैं स्थूल, सूक्ष्म और कारण जो एक दूसरे से घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हैं अर्थात् विना एक के दूसरे की स्थिति नहीं रहसक्ती—पंच महा भूतात्मक स्थूल शरीर देह है जिस के मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार रूपी अन्तष्करण में सूक्ष्म

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शरीर रूप से भगवत् की तटस्था चैतन्य शक्ति जीव और उसके भीतर उसका नियन्ता तथा प्रेरक कारण शरीर स्थित रहता है यह कारण शरीर भगवत् के चतुर्थ व्यूह अनिरुद्ध वा नारायण का स्वरूप है—सूक्ष्म शरीर जीव ही प्रकृति के कार्यरूपी कर्मों से बँधा हुआ सुख दुख अपने कारण शरीर की प्रेरणा से भोगता है और इन सबसे परे एक चौथा स्वरूप है जो तीनों शरीरों के भीतर और बाहर भगवत् सत्ता के प्रथम व्यूह सर्वव्यापक वासुदेव अन्तरयामी रूप से सबका साक्षी रहता है—पारमार्थिक विषय का सम्बन्ध धर्म्म से है और धर्म्म का प्रथम चरण शौच है अतएव स्थूल शरीर द्वारा सूक्ष्म शरीरस्थ जीव को अपने कारण शरीर की ओर शौचही द्वारा अन्तरमुखीन होने से वासुदेवरूप का साक्षात्कार होसक्ता है सो शौच दो प्रकार का है एक बाह्य और द्वितीय आन्तरीय; बाह्य शौच से स्थूल शरीर और आन्तरीय शौचद्वारा सूक्ष्म शरीर शुद्ध होकर सूक्ष्म शरीरस्थ जीव अपने कारण शरीर की ओर अन्तर मुख होसक्ता है अर्थात् बाह्य शुद्धि ही आन्तरिक शुद्धि की प्रथम सीढ़ी है यदि प्रथम सीढ़ी छोड़ कर उसके आगे की सीढ़ी पर पाउँ धरैं तो केवल कठनाई हो न होगी किन्तु चूक जाने पर अधःपतन का भी भय रहैगा अतएव बाह्य शुद्धि के विना आन्तरिक शुद्धि होने में भय है—देह पिण्डस्थ तीनों शरीर का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध रहने से प्रथम स्थूल शरीर की शुद्धि करना परमावश्यक है—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यह शुद्धि स्नान, द्वादशतिलक, ऊर्ध्वपुंड्, और कण्ठी माला मुद्रा अंग पर धारण करने से होती है।

स्नान – प्रत्येक तत्व अपने सजातीय पवित्र तत्त्व द्वारा वा अपने कारणतत्व के संसर्ग से जिसका वह विकार है शुद्ध होता है यह स्वयं सिद्ध है इसमें कोई प्रमाण की आवश्यकता नहीं – पंचतत्वात्मक देह पिण्ड में पार्थिविक तत्व अधिक होने से जब उसका संसर्ग अपने कारण तत्व जल से होता है तभी वह शुद्ध और विकार रहित होता है इसी कारण अधिक जलाशय नदी में स्नान करना उत्तम स्नान बताया गया है फिर यह भी प्रत्यक्ष है कि स्नान द्वारा शरीर की दुर्गन्ध तथा विषैले वाह्य परमाणु जो रोम छिद्रों में अट जाते हैं स्नान द्वारा उनके विनष्ट हो जाने से देह स्वच्छ और शुद्ध हो जाती है तब उसके द्वारा जो कुछ कार्य होगा सो सुगम और शुद्ध होगा। इसी लिये प्रातःकाल का स्नान उत्तम कहा गया है क्योंकि उस समय रात्रि के विश्राम से सब रोमछिद्र सिथिल तथा ब्रह्ममुहूर्त्त होने से शान्त होते हैं। ऊर्ध्वपुंड् तथा द्वादश तिलक गोपी चन्दन से मन्त्र सहित लगाने से देह का पार्थिविक तत्व अपने सजातीय पवित्र तत्व गोपी चन्दन इत्यादि जो भगवत् धाम द्वारिका वा श्री वृन्दावनादि की पवित्र भूमि का आंशिक पदार्थ है उसके संसर्ग तथा मंत्रशक्ति द्वारा शुद्ध होता है जिस का कुछ शास्त्रीय प्रमाण नीचे उद्धृत किया जाता है यथाः –

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पाद्मे ब्रह्मघ्नो वाथ गोघ्नो वा हैतुकः सर्व पापकृत्। गोपी चन्दन सम्पर्कात् पूतो भवति तत् क्षणात्॥ १॥ गोपी चन्दन खण्डन्तु यो ददाति हि वैष्णवे। कुल मेकोत्तरं तेन सम्भवेत्तारितं शतम्॥ २॥

स्कान्दे—शंखचक्राङ्कित तनुः शिरसा मंजरी धरः। गोपी चन्दन लिप्तांगो दृष्टश्चेत्तदघं कुतः॥१॥ गोपी मृत्तुलसी शंखः शालिग्रामः सचक्रकः। गृहेऽपि यस्य पंचैते तस्य पाप भयं-कुतः। २॥

पाद्मे—ऊर्ध्वपुंड्रं मृदा शौभ्यं ललाटेयस्य दृश्यते। सचांडालोऽपि शुद्धात्मा पूज्य एवनसंशयः॥ १॥

ब्रह्मपुराणे—योगो दानं तपो होमः स्वाध्यायः पितृतर्पणम्। भस्मी भवति तत्सर्वं मूर्ध्वपुंड्रं विना कृतम्॥ १॥

ब्रह्माण्डे—अशुचिर्वाप्य नाचारो मनसा पाप माचरन्। शुचिरेव भवेन्नित्य मूर्ध्वपुंड्रांकितो नरः॥

भगवद्वचनम्—ऊर्ध्वपुंड्र धरो मर्त्यो म्रियते यत्र कुत्र चित्। श्वपाकोऽपि विमानस्थो ममलोके महीयते॥ १। ऊर्ध्वपुंड्र धरो मर्त्यो गृहे यस्यान्न मश्नुते। तदा विंशत्कुलं तस्य नरकादुद्धराम्यहम्॥

पाद्मे पर्वताग्रे नदी तीरे विल्वमूले जलाशये। सिंधु तीरे च वल्मीके हरिक्षेत्रे विशेषतः॥ १॥ विष्णोः स्नानोदकं यत्र प्रवाहयति नित्यशः। पुंड्राणां धारणार्थाय गृह्णीया त्तत्र मृत्ति-काम॥ २॥ श्रीरंगे वेङ्कटाद्रौ च श्री कूर्म्मे द्वारके शुभे। प्रयागे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नारसिंहाद्रौ वाराहे तुलसी वने॥ ३॥ क्रिया विहीनं यदि मंत्र हीनं श्रद्धाविहीनं यदि काल वर्जितम्। कृत्वा ललाटे यदि गोपिचन्दनं प्राप्नोति तत्कर्म फलं सदाक्षयम्॥

यजुः कठ शाखायां—धृतोर्ध्वपुंड्रः कृत चक्र धारी विष्णुं परं ध्यायति यो महात्मा। स्वरेण मंत्रेण सदा हृदिस्थितं परात् परं यन्महतो महान्तम्॥

अथर्वणि - एभिर्वयमुरुक्रमस्य चिन्हैरङ्किता लोके सुभगा-भवेम। तद्विष्णोः परमं पदंये गच्छन्ति लाञ्छिता:॥

तुलसी की कराठी वा माला से भी ऊपर लिखित आशय है और उस के माहात्म्य में भी कहा है यथा:—

विष्णु धर्म्मोत्तरे-भगवद्वचनम्—तुलसी काष्ट मालाञ्च कण्ठस्थांवहतेतुयः। अप्यशौचोऽप्य नाचारो मामेवैति न संशयः

स्कान्दे— यः पुनस्तुलसी मालां कृत्वा कण्ठे जनार्दनम्। पूजयेत् पुण्य माप्नोति प्रति पुष्पंगवा युतम्॥१॥ येषां न तुलसी माला तेनरा मूढ़ मानसाः। अन्नं विष्ठा जलं मूत्रं पीयूषरुधिरं भवेत्॥ २॥ अतस्सर्वेषु कालेषु न त्याज्या कण्ठ मालिका। क्षणार्धं तद्विहीनोयः विष्णुद्रोही नसंशयः॥ ३॥

गरुड़े—तुलसी दल जांमालां कृष्णो त्तीर्णां वहेत्तुयः। पत्रे पत्रे ऽश्वमेधानां दशानां लभते फलम्॥१॥ तुलसी काष्ट माला भिभूषितः पुण्य माचरेत्। पितॄणां देवतानांच कृतं कोटि गुणं फलं॥ २॥ आन्तरीय शुद्धि के लिये प्रथम मंत्र सहित तीन वेर आचमन किया जाता है जिसका आशय यह है कि मंत्र

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

का प्रयोग जल द्वारा होता है और मंत्र से सूक्ष्म शरीर का सम्बन्ध है। प्रथम आचमन से तालू से कण्ठ पर्य्यन्त शुद्ध होता है, द्वितीय आचमन से सूक्ष्म शरीर शुद्ध होता है और तृतीय आचमन द्वारा वह जीव रूपी सूक्ष्म शरीर अपने कारण शरीर की ओर अन्तर्मुख होता है जिस से कार्य सिद्धि होती है और इसके अतिरिक्त मानसिक शुद्धि बहुत प्रकार से हुआ करती है यथा प्राणायाम, सत्य, दया, दान, तप इत्यादि। लोक दृष्टि से विष्णु अनुयायी वैष्णव को अपनी संस्था का वाह्य चिन्ह धारण करना परमावश्यक ही है —

इति

आचार तथा धर्मशास्त्र

श्लोक—आनन्द चिन्मय रसप्रति भाविताभिस्ताभिर्यएव निजरूप तथा कलाभिः। गोलोक एव निवसत्यखिलात्म भूतो गोविन्द मादि पुरुषंत महं भजामि॥

प्रत्येक कार्य्य वा पदार्थ देश कालानुसार अपनी सीमा पर अवलम्बित रहता है जिसका नाम आचार व स्वाभाव है। कोई-कार्य्य वा पदार्थ जबतक सीमा बद्ध रहता है सदाचार व शुद्ध कहा जाता है और जब वही कार्य वा पदार्थ सीमा को उल्लंघन कर के उस से च्युत हो जाता है तब उसको अनाचार वा अशुद्ध कहते हैं इन्हीं दोनों को शास्त्र कारों ने अनभिज्ञ पुरुषों के लिये सीमा बद्ध कर के प्रत्येक की सीमा को बता दिया है जिसको धर्म्मशास्त्र कहते हैं दृष्टान्त स्वरूप

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

...ग्रन्थालय नरसिंहन्, काशी वाराणसी-5

स्वरूप समझ सक्ते हैं कि मल मूत्र जब तक अपने स्थान वा सीमावस्था पर रहता है अशुद्ध नहीं कहा जाता परन्तु वही मल मूत्र सीमा वा स्थान से अलग वा च्युत होने पर अशुद्ध माना जाता है— देश काला नुसार आचार का घनिष्ठ सम्बन्ध जिस प्रकार मनुष्य के स्थूल शरीर से है उसी प्रकार उसके वर्णाश्रम से भी है कारण कि जिस वर्णाश्रम में कोई कार्य्य विधि बताया गया है दूसरे वर्ण वा आश्रम में उसी का निषेध किया गया है जैसे वेदाध्ययन तीन वर्णों के लिये विधि और चाथे वर्ण शूद्र के लिये निषेध बताया गया है—सृष्टि के किसी कार्य्य का प्रभाव न्यून वा अधिक रूप में पंचतत्वात्मक मनुष्य शरीर पर अवश्य पड़ैगा अतएव मनुष्य के किये हुये सत् वा असत् आचार का प्रभाव भी उसके स्थूल शरीर पर अवश्य ही पड़ना सम्भव है यहां पर यह प्रश्न होसकता है कि सभी वर्णं के मनुष्यों पर एक ही रीति से प्रभाव पड़ना चाहिये इस का कारण यह है कि प्रत्येक मनुष्य का स्थूल शरीर उसके पूर्वजन्म के सत् वा असत् आचार द्वारा उसी वर्ण में बनता है जिस वर्ण के योग्य उसके पूर्व आचारों का सम्बन्ध है अर्थात् वही आचार उस शरीर के कारण स्वरूप होते हैं इसी सिद्धांत पर विष्टा स्वरूप गोबर तथा हाड़ सदृश शंख वा चक्र पवित्र बताये गये हैं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वेद पुराण, इतिहास ।

श्लोक—प्रेमांजन च्छुरित भक्ति विलोचनेन संतः सदैव हृदयेपि विलोकयंति । तं श्याम सुन्दर मचित्य गुणप्रकाशं गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥

प्रत्येक मनुष्य का शरीर आधिभौतिक, मन आधिदैविक और बुद्धि आध्यात्मिक है—शरीर कर्म्म के द्वारा, मन उपासना द्वारा तथा बुद्धि ज्ञान द्वारा शुद्ध होती है अत एव जिन शास्त्रों में कर्म्म, उपासना और ज्ञान तीनों का उपदेश पूर्णतः हो वही अपौरुषेय भगवत् वाक्य शास्त्र हो सक्ते हैं—शब्द ब्रह्म रूपी वेद अपने संहिता (मंत्र), ब्राह्मण और उपनिषद (अरण्य) भागों में कर्म, उपासना तथा ज्ञान का प्रधानतः उपदेश करते हैं यही वेद का अपौरुषेयत्व है यथा दैवी मीमांसा—"गुण भाव मयत्वाद्भगवद्वाक्यं वेदः"—

त्रिगुणात्मिक प्रकृति के तीनों गुणों तथा तीनों भावों का विचार रखते हुये तीनों गुणों के जीवों की उन्नति के उपाय वेदमें पूर्णतःबताये गये हैं यथाश्रुति 'त्रयोर्था सर्व्व वेदेषु'वास्तव में वेद एक ही भगवद्वाक्य है परन्तु इन्हीं तीनो भावोंके पृथक पृथक वर्णन होने से वेदत्रयी अर्थात्ऋक् यजुः और साम और तत्पश्चात् अथर्व्व नामों से विख्यात हैं और उनकी शाखा उपशाखा सब ११३१ अथवा ११८० तक कीगई हैं और वेदों

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

का विभाग करने से ही विभाग कर्त्ता का नाम श्री वेदव्यास कहलाता है—यह एक सिद्ध बात है कि परमार्थ का विचार (जो मनुष्य के प्रत्यक्ष वा अनुमान द्वारा नहीं होसक्ता है क्यों कि मनुष्य की बुद्धि परिमित है अपौरुषेय वाक्य अर्थात् भगवान् के वाक्य से होता है भगवान् नित्य वस्तु हैं इसी से उनका ज्ञान और वाक्य भी नित्य है, वह परमात्मा पहिले नहीं था किसी नियत समय में उत्पन्न हुआ वा बना है ऐसा नहीं होसक्ता है अतएव इसी अपौरुषेय वाक्य का नाम वेद है परन्तु वेद में भी मंत्रों वा सूक्तों के ऋषि माने और लिखे गये हैं उदाहरणार्थ गायत्री मंत्र ही का ऋषि विश्वामित्र को लिखा है जो सृष्टि के बहुत पीछे हुये हैं--

यदि गायत्री को विश्वामित्र की कही हुई समझा जाय तो वह "वेद माता" नहीं हो सक्ती और दूसरी यह कठिनता पड़ती है कि विश्वामित्र से पूर्व के ऋषियों को यज्ञोपवीत में क्या उपदेश होता होगा अतएव इस सब का निर्णय यही हो सक्ता है कि वेद नित्य हैं और तैसे ही पुराण भी नित्य हैं यह सब श्री भगवान् के ज्ञान में सर्वदा रहते हैं जिस प्रकार हमारी पढ़ी लिखी विद्या हमारे मस्तिष्क में रहती है उसको हम समय समय पर दूसरों को सुनाते और समझाते हैं ठीक इसी प्रकार समस्त वेद पुराणों को भगवत् ही श्रीब्रह्मा को आदि ले सब ऋषि मुनियों को पढ़ाते और समझाते हैं भेद इतना ही है कि किसी को हृदय में प्रेरणा कर के पढ़ाते हैं, किसी को साक्षात्

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रूप से और किसी को गुरू परम्परा द्वारा। जैसे चारों वेद नित्य होकर भी समय समय पर ऋषियों द्वारा इस मनुष्य लोक में प्रकाश होते हैं ऐसे ही सब पुराणों का भी प्रकाश हुआ करता है उन में जीव की बुद्धि से बनाई हुई बातें नहीं हैं जो इतिहास मनुष्यों के नाम से मिलते हैं वे भी प्रायः वैसे ही होते हैं कभी कभी उन में जो कुछ अन्तर हो जाता है वही कल्प भेद कहा जाता है जैसे एक ही मनुष्य नित्य एक ही सामिग्री से एक ही तरह की रसोई बनावै तब भी उस में नित्य कुछ न कुछ स्वाद में भेद हो जाता है - यह सब नित्य वेद पुराण ब्रह्म लोक में मूर्त्तिमान हैं यहां उनका आविर्भाव तिरोभाव है श्रीवेदव्यास तथा अन्य ऋषिगण वेदपुराण इतिहास के "कर्त्ता" नहीं हैं किन्तु "स्मर्ता" हैं "पुराण पंचमो वेदः" अर्थात् पुराण पांचवां वेद है इसी से इसका नाम पुराण है जिसकी निरुक्ति है "पूरणात् पुराणं" अर्थात् वेदों में जो कुछ रहजाता है वह पुराण से पूर्ण होता है— वाजसनेयी ब्राह्मणोपनिषद् में भी कहा है यथा "अस्य महतो भूत-य निश्वसित मे तदृग्वेदो यजुर्वेदः साम वेदोऽथर्वाङ्गिरस इतिहासः पुराणम्" स्मृतिकार ने भी कहा है यथा "युगान्तेऽन्तर्हिं तान्वेदान्सेतिहासान्महर्षयः लेभिरे तपसा पूर्व मनुज्ञाताः स्वयम्भुवा" ॥ --

महापुराण के दश लक्षण हैं अर्थात् १ विश्व का सर्ग, २ विसर्ग, ३ वृत्ति (स्थान), ४ रक्षा (पालन), ५ मन्वन्तर,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

६ वंश, ७ वंश चरित्र, ८ संस्था (निरोध), ९ मुक्तिहेतु (ऊति), १० अपांश्रय इसी प्रकार उप पुराण के पांच लक्षण हैं यथा १ सर्ग, २ विसर्ग, ३ वंश, ४ वंशचरित्र, और ५ मन्वन्तर अतएव जिसमें ऊपर लिखे लक्षण न हों उसकी महापुराण वा उप पुराण संज्ञा नहीं होसक्ती (भा० १२ ७-९)

इति

अथ शरणागत तथा संतसंग

श्लोक –वेणुं क्वणंत मरविन्द दलाय ताक्षं वर्हा वतंस मसिताम्बुद सुंदरांगं। कंदर्प्प कोटि कमनीय विशेष शोभं गोविन्द मादि पुरुषं तमहं भजामि

संसार निवृत्त भगवत् प्राप्ति का उपाय है तिस संसार वृत्त छेदन के लिये केवल दोहा प्रवल तीक्ष्ण शस्त्र शास्त्रकारों ने बताये हैं एक वैराग द्वितीय अभ्यास–माया तथा अपनी जोवशक्ति का यथार्थ विचार करके माया कृत कार्य्यों से घृणा प्रकट होने का नाम वैराग है और उस घृणा की निवृत्ति के दृढ़ता पूर्वक उद्योग को अभ्यास कहते हैं–इन्हीं दो शस्त्रों द्वारा संसारोत्पादकमनसे संग्राम करना होता है यह संसार तथा मन प्रकृति माता के कार्य्य हैं मनो निग्रह समय वह मन अपने संसृत कार्य्य सहित प्रकृति माता को गोद में प्रवृत्त होता है और प्रकृति माता उसका पक्ष लेकर जीव से विजय प्राप्त करा देती है अत एव उससे विजय पाने को यदि ऐसे पुरुषोत्तम की शरण ली जाय जिसका अधिपत्य

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उस प्रकृति पर हो तो कार्य्य सिद्धि होने में विलम्ब न लगैगा अब प्रश्न होता है कि यह शरण किस प्रकार प्राप्त हो। यह शरण भी उसी प्रकृति माता को सहायता से प्राप्त होती है अब विचार करना है कि शरण क्या पदार्थ है-सब ओर का आश्रय छोड़ कर निरभिमान अपना सर्वस्व दूसरे किसी के अधिपत्य में निवेदन करने को शरण वा शरणागत कहते हैं यह शरण केवल उन्हीं दो वैराग तथा अभ्यास शस्त्रों द्वारा मन और उसके संसृत कार्य्य से संग्राम करके प्रकृति माता को सहायता से भगवच्चरणार्विन्दों में अपना सर्वस्व निवेदन करने से प्राप्त होती है यदि कोई चाहै कि बिना प्रकृति माता की सहायता के स्वयं अपने ज्ञान बल से भगवत् माया से तिर जाय सो असम्भव है कारण कि विना ज्ञान के वैराग तथा अभ्यास नहीं होसक्ता और विना बुद्धि के ज्ञान नहीं होसकता सो बुद्धि भी अष्ट प्रकृति में से एक प्रकृति है यथा भगवद्गीता में भगवान् ने कहा है "भूमि रापो नलो वायुः खं मनो बुद्धि रेवच। अहंकार इतीयंमे भिन्ना प्रकृति रष्टधा॥ (७—४) अतएव विना प्रकृति स्वरूपणी बुद्धि का आश्रय लिये कृत् कार्य्य नहीं होसक्ता—अब यह शुद्ध प्रज्ञा बुद्धि किस प्रकार होसक्ती है सो विना सत संग नहीं हो सक्ती और सत संग विना भगवत् कृपा नहीं मिल सकता और भगवत् कृपा जो महानुभावों के सत संग काही फल है विना भगवत् शरण लिये नहीं प्राप्त हो सकती इसलिये सिद्ध हुआ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कि प्रकृति स्वरूपणी प्रज्ञा बुद्धि की सहायता से वैराग तथा अभ्यास शस्त्रों द्वारा मनों निग्रह करके भगवत् शरण जाने से ही भगवत् कृपा द्वारा महानुभावों का सत्संग लाभ करके संसार से निवृत्त होकर भगवत् प्राप्ति होसक्ती है—

इति

तर्क वितर्क

श्लोक—पंथास्ति कोटि शत वत्सर मप्य गम्यो वायोरथापि मन सां मुनि पुंगवा नाम्। सो व्यस्ति यत्पद सीम्न्य विचिन्त्य तत्वे गोविन्द मादि पुरुषंत महं भजामि॥

शास्त्र जो प्रत्येक विषय के सिद्धान्त (सिद्ध किया हुआ विषय) का समूह है उस पर विचार करने के लिये किसी शंका का उठाना तर्क कहलाता है उस का समाधान शास्त्रों ही द्वारा विचार करने से हो सकता है परन्तु जो शंका शास्त्र विपरीत उठाई जाय उसको कुतर्क कहते हैं जिसका समाधान कदापि नहीं हो सक्ता जैसे कोई तर्क करै कि ईश्वर ने सृष्टि रचना क्यों की उत्तर मिलैगा स्वेच्छाचारी है फिर शंका उठाई कि ईश्वर स्वतन्त्र क्यों है फिर उत्तर मिला कि वह सर्व शक्तिमान है फिर शंका उठाई कि वह ऐसा क्यों है इसी प्रकार आगे आगे शंका उठाये जावे तथा शास्त्रों पर विश्वास न रखने को ही कुतर्क कहते हैं—शास्त्रों में आधिभौतिक, आधिदैविक तथा आध्यात्मिक तीन प्रकार के विचार अर्थात् भाव हुआ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करते हैं और उन विचारों पर तर्क उठने का समाधान तत् तत् विचार सम्बन्धीय द्वारा हुआ करता है-यदि आध्यात्मिक विचार आधिभौतिक वा आधिदैविक विषय द्वारा किया जावैगा तो जिस प्रकार कोई परीक्षक साहित्य प्रश्न का विचार गणित द्वारा करने लगै तो उस का परिणाम निःफल हो जाता है ठीक उसी प्रकार समाधान होने के स्थान पर अन्यान्य भ्रम उत्पन्न हो जावैंगे जिस प्रकार कुछ चांवल भात के अर्थ जल डाल कर अग्नि पर रख दें और गल जाने पर यदि उस में अग्नि का दाह बराबर देते ही जावें तो वह माड़ होकर एक कदर्य्य वस्तु हो जावैगी ठीक यहां आज कल के तर्क वितर्क का फल मनुष्यों के तामसि स्वभाव तथा विद्या शून्य होने से होता है कारण कि तामसी बुद्धि का स्वभाव यही है किमहानुभावों के बचनों पर विश्वास न रखकर और अपनी ही मदान्ध बुद्धि को वलयसी मान कर शास्त्रीय सिद्धान्तों को तुच्छ तथा मिथ्या समझ बैठना है जिस का परिणाम यह होता है कि शंका का समाधान न होकर बिपरीत बुद्धि द्वारा भ्रम तथा नास्तिक बुद्धि हो जाती है श्री भगवान् ने कहा भी है यथा-"यःशास्त्र विधि मुत्सृज्य वर्त्तते काम कारतः। न स सिद्धि मवाप्नोति न सुखं न परांगतिम्'॥ (गी-१६-२३) और भी कहा है यथा 'अधर्म्मं धर्म्मं मिति या मन्यते तमसाऽऽवृता। सर्वार्थान्विपरीतांश्चबुद्धिःसा पार्थ! तामसी॥ इति

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(०८)

अथसंज्ञा प्रकरण

श्लोक – अद्वैत मच्युत मनादि मनंत रूप माद्य पुराण पुरुषं नवयौवनंच। वेदेषु दुर्ल्लभ मदुर्ल्लभ मात्म भक्त्या गोविन्द मादि पुरुषंत महं भजामि॥

अनन्त शक्ति सम्पन्न पर मात्मा की मुख्य तीन शक्ति —	बहिरंगा (सत्वामाया) १-अन्तरंगा आनन्द आह्लादिनी) २-तटस्था (चिद्वा जीव) ३
परमात्मा के तीन भाव	ब्रह्म (आध्यात्मिक), ईश्वर (आधिदैविक), विराट (आधिभौतिक)
दोप्रकार की उपासना	निर्गुण, सगुण (शब्दब्रह्म)
परमात्माके चारव्यूह	वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध
चतुर्वेद	ऋक्, यजुः, साम अथर्व
पांच उपवेद	आयुर्वेद (वैद्यक शास्त्र), धनुर्वेद (शस्त्रविद्या) गन्धर्ववेद (सांगीत विद्या) स्थापात्यवेद (कला-विद्या) इतिहास पुराण (सर्वांगीय पंचमवेद)
वेद के तीन भाग	मंत्र (संहिता),ब्राह्मण,अरण्य(उपनिषद्)
-१८पुराण तथा श्लोक संख्या चार लक्ष	ब्रह्मपुराण (१००००), पद्मपुराण ५५००० विष्णु पुराण (२३०००) शिवपुराण (२४०००), श्रीमद्भागवत् महा पुराण (१८०००), नारद पुराण (२५० ०), मार्कण्डेय पुराण (९०००), अग्निपुराण

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

	(१५४००), भविष्यपुराण (१४५००), ब्रह्मवैवर्त्त पुराण (१८०००), लिंगपुराण (११०००), बराह पुराण (२४०००), स्कन्द पुराण (८११००), बामन पुराण (१००००), कूर्म पुराण (१७०००), मत्स्य पुराण (१४०००), गरुड़ पुराण (१९०००) ब्रह्माण्ड पुराण (२२०००)
१८ उपपुराण	आद्य. नारसिंह, बायवीय, शिवधर्म, (नन्दीश भाषित), दुर्वासा, नारदीय. उशना, कापिल, वारुण, साम्ब, कलिका माहेश्वर, दैवि, पाराशर, मारीच, भास्कर, और नन्दकिशोरकृत दो पुराण —
महापुराण और उप पुराण के लक्षण (भा० १२-७-९)	विश्व का सर्ग, विसर्ग, वृत्ति (स्थान), रक्षा (पालन), मन्वन्तर, वंश, तथावंश चरित्र, संस्था (निरोध), मुक्ति हेतु (ऊति), अपाश्रय यह दश जिसमें हों सो महापुराण है और सर्ग, बिसर्ग, बंश, बंशजों का चरित्र और मन्वन्तर यह पाँच ही जिसमें हों उसको उप पुराण कहते हैं।
षड् दर्शन शास्त्र	न्याय, वैशेषिक, योग, सांख्य, कर्म्म मीमांसा, ब्रह्म मीमांसा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सृष्टि दो प्रकार की	१-जंगम २-स्थावर (चर, अचर)
जीवोत्पत्ति चारप्रकार	स्वेदज, उद्भिज, अंडज, जरायुज ।
जीव के पंच कोश	अन्नमय, प्राणमय,मनोमय, विज्ञानमय, आनन्दमय ।
८४ लक्ष योनि में जीव भ्रमण	दोहा —नव जलचर दश व्योमचर,कृमि ग्यारह वनबीस । मानुष तन हैं चारलक्ष पशुओं के हैं तीस ॥
जीवकीशारीरिकअव०	वाल, पोगंड, किशोर, युवा, वृद्धा
४ वर्ण	ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र ।
४ आश्रम	ब्रह्मचर्य गार्हस्थ. वानप्रस्थ. सन्यास
धर्म के चार चरण	दया, तप, सत्य, शौच
धर्म्म विभाग	दानधर्म, वर्णाश्रम धर्म, आपत्तिधर्म, नारीधर्म, मोक्ष धर्म्म
११ रुद्र तथा उनकी स्त्री	मन्यु मनु, महिनस, महान् शिव, ऋतुध्वज, उग्ररेता, भव, काल, वामदेव. धृतव्रत,। इनकी स्त्री क्रम से—धी, वृत्ति, उशन्ना, उमा, नियुत्सर्पि, इला, अम्बिका, इरावती, सुधा, दीक्षा, रुद्राणी,
प्रत्येक आश्रम की चार चारवृत्तिक्रम से	सावित्र, प्रजापत्य, ब्राह्म, वृहत्; वार्त्ता, संचय, शालीन, शिलोंछ; वैखानस, वालशिल्य, औदुम्बुर, फेनप; कुटीचक, वह्वोद, हंस, निष्क्रिय ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

३ लोक	भूः भुवः, स्वः ।
१४ भुवन (लोक)	भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक महर्लोक, जनलोक, तपोलोक, सत्यलोक, (ऊर्द्ध्वलोक ७), अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल रसातल, पाताल लोक (अधो लोक ७)
सप्त द्वीप	जम्बू, प्लक्ष, शाल्मली कुश क्रौंच शाक, पुष्कर
३ गुण	सात्विक, राजस, तामस ।
पंच महाभूत	१ पृथ्वी २ जल ३ अग्नि ४ वायु ५ आकाश
पंच तन्मात्रा(ज्ञानेंद्रिय)	१ गंध, २ रस, ३ रूप, ४ स्पर्श, ५ शब्द
पंच कर्मेंद्रिय	श्रवण, नासिका (घ्राण), चक्षु, रसना, त्वक्
श्री ब्रह्मा के दश पुत्र	मरीच, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, भृगु, वशिष्ठ, दक्ष, नारद, ।
नैष्ठिक ब्रह्मचारीमुनि	सनक, सनन्द, सनातन, सनत्कुमार
४९ पवन	एक ज्योति, द्विज्योति, त्रिज्योति, ज्योति एक शक्र, द्विशक्र, त्रिशक्र, इन्द्र, गतहश्य ततः, पसितकृत, पर, मित, सम्मित, सुमति, ऋतजित्, सत्यजित् , सुषेण, सेनजित, अंतिमित्र, अनमित्र, पुरुमित्र, अपराजित, ऋत, ऋतबाह, धर्ता, धरुण, ध्रुव, बिधारण, देवदेव, ईदक्ष, अदक्ष, व्रतिन, असहक्ष, समर, धाता, दुर्ग,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

	धिति, भौम, अभियुक्त, अयात्, सह, द्युति, द्युप्, अनाप्य, अथवास. काम, जय, विराट ।
एकादश बीज	अज, मणिमा, यज्ञ, अच्युत, हय, केशव ईश इन, विष्णु, उरुक्रम. ईश्वरः ।
पंच अज्ञान वृत्ति (अविद्या)	तम (अपने स्वरूप का ज्ञान न होना), मोह (देह इन्द्रियादि में अहम् बुद्धि), महा मोह (भोगों की इच्छा), तामिश्र (भोगेच्छा भग्न होने पर क्रोध), अंध-तामिश्र (भोगों के सर्वथा नाश होने पर अपने को मृतक समान जानना)
कामदेव के पंच बाण	शोषण, दीपन,सम्मोहन, तापन, उन्मादन
सप्त ऋषि	कश्यप. अत्रि, बशिष्ठ, बिश्वामित्र. गौतम, जमदग्नि, भरद्वाज.
सप्त स्वर	षडज रिषभ, गान्धार, मध्यम. पंचम धैवत, निषाद ।
६ राग	भैरव, हिंडोल, श्री. दीपक, मेघ मलार, माल कोस
अष्ट दिक्पाल	इन्द्र, अग्नि, यम, नैऋत, बरुण. पवन, कुवेर, ईशान ।
नवधा भक्ति	श्रवण कीर्त्तन, स्मरण. पादसेवन,अर्चन, बन्दन, दास्यु, सख्य, आत्मनिवेदन,
४ प्रकार मुक्ति	सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य. सायुज्य

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अष्ट प्रकार मूर्त्ति	शैली, दारुमयी, लौही लेप्या लेख्या, सैकती, मनोमयी, मणिमयी।
४ प्रकार के भोजन	भक्त, भोज्य, चोष्य लेह्य
नव द्रव्य	पृथ्वी, जल, अग्नि वायु, आकाश दिशा, काल, मन आत्मा।
पंचामृत्	दुग्ध, दधि, शर्करा मधु (शहत) घृत
पंच गव्य	गोबर, गोमूत्र, दुग्ध, घृत, दधि
षोड़श संस्कार	गर्भाधान्, पुंसवन्, सीमन्तोन्नयन्, जात कर्म, नामकरण, अन्नप्राशन्, चूड़ाकरण, उपनयन, ब्रह्मव्रत्, वेदव्रत, समावर्त्तन, विवाह, अग्न्याधान, दीक्षा, महादीक्षा, संन्यास।
पञ्चांग	तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण (ज्योतिष) जप, होम, तर्पण अभिषेक ब्राह्मण भोजन (तंत्र शास्त्रका पुरश्चरण)
षोड़शोपचार	आसन, स्वागत, (भले आये) पाद्य, अर्घ्य, आचमनीयर्क, मधुपर्क, आचमन स्नान, वस्त्र, भूषण गंध पुष्प धूप, दीप, नैवेद्य वंदन।

इति

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सिंहावलोकन तथा निराकरण।

श्लोक मायाहि यस्य जग दंड शतानि सूते त्रैगुण्य तद्वि-षय वेद वितायमानो। सत्वाबलंवि पर सत्त्व विशुद्ध सत्वं गोविंद मादि पुरुषंत महं भजामि॥—

अनन्त और अचिन्त्य शक्ति सम्पन्न पर तत्व भगवान् श्री कृष्ण सच्चिदानन्द विग्रह हैं उन की सत् शक्ति स्वरूपा माया अपने पुरुष प्रकृति दो रूप धारण कर के समस्त ब्रह्माण्ड की रचना करती है-उनकी चिद् शक्ति उस माया शक्ति के कार्य में सहायता करती है और उनकी आनन्द शक्ति उन दोनों शक्तियों से मिल कर उन की अनादि काल शक्ति के भीतर समस्त चराचर ब्रह्माण्ड का कार्य पूर्ण करती है— वही आनन्द शक्ति उन श्रीकृष्ण के रूपका माधुर्य्य है और तिस ही माधुर्य्य रूप का ऐश्वर्य निर्गुण निराकार ब्रह्म है— वह भगवान् किसी बढ़ी हुई शक्ति के दबाने एवं दबी हुई शक्ति की करुणा वश रक्षा करने को निज इच्छा से यथायोग्य अवतार धारण करत हैं—उन्हीं की चिद्शक्ति का एक अंश तटस्था जीव शक्ति है जो अपने अंशी रूप स्वामी से बिछुड़ कर माया में मोहित होजाता है और स्वामी से मिलने को उत्सुक होता है परन्तु माया अपने कार्य में न्यूनता देख कर उस विछुड़े हुए जीव को स्वामी तक पहुंचाने में बाधक होती है और करुणा मय भगवान् सत्य गुरु महात्माओं का रूप

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धारण करके उस जीव को दीक्षा देकर भक्ति, ज्ञान और कर्म का उपदेश देते हैं तब जीव श्री गुरु कृपा से ज्ञान और उपासना के साधनों द्वारा प्रेमभक्ति लाभ करके अपने अंशी रूप स्वामी का सान्निध्य प्राप्त करता है जिस का नाम मोक्ष है इसी प्रेमाभक्ति का साधन सर्व रसों का सार श्रृंगार रस बताया गया है जो भगवत् के माधुर्य्य रस का उद्दीपन है और इसी के द्वारा निरभिमान, भगवत् स्वरूप में तत्पर हो कर भगवत् सान्निध्य की प्राप्ति होती है— परोक्ष का ज्ञान अपरमित होने से भगवत् ज्ञान रूप वेदों एवं उनके अंग उपनिषद् तथा पुराणों द्वारा होता है इस कारण शब्द प्रमाण ही का आदर किया गया है। यद्यपि भगवत् सान्निध्य प्राप्त करने को चारों वैष्णव सम्प्रदाय समान हैं तथापि श्री माध्व सम्प्रदाय के महत्त्व का कारण यह है कि इस सम्प्रदाय में स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ने श्री कृष्ण चैतन्य रूप में अवतीर्ण होकर अपनी निगूढ़ प्रेमाभक्ति का आनन्द निज आह्लादिनी शक्ति स्वरूपा श्री राधा जी द्वारा कोटि कोटि जीवों को प्रदान किया है और इस कलिकाल में अपनी लीला एवं नाम संकीर्त्तन को ही मुख्य साधन बता कर उपदेश किया है। इस सम्प्रदाय का विशेष ज्ञान सम्मिलित पत्र में प्रदर्शित है जिसमें श्री राधा प्रेम भाव लेकर स्वयं श्रीकृष्ण भगवान् नवद्वीप में श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु रूप से गौर रूप धारण करके प्रकट हुए हैं और श्री राधा जी की अष्ट मुख्य सखी अष्ट कविराज और तिन अष्ट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सखियों में प्रत्येक की अष्ट अष्ट अनुचरी लीला की सहायता निमित्त ६४ महन्तों में तथा भगवत् के द्वादश मुख्य गोपाल और अष्ट मंजरी गण अन्य महात्माओं के रूप में अवतीर्ण हुए हैं जिसके प्रमाण के लिये श्री अनन्त संहिता में श्रीकृष्ण वचन दृष्टव्य हैं।

इति

श्री गौरांग अवतार ।

(लेखक श्रीयुत आचार्य्य मधुसूदन गोस्वामी)

युगधर्म प्रचार कर जगत् में शांति को वृष्टि करने के लिए जोर जबर दस्ती से नहीं केवल प्रेमसे हरिनामामृत की मधुर लहरी विस्तार करने के लिए करुणामय श्री कृष्ण वंग देश में चार सवाचार शताब्दी पहिले श्री गौरांग रूप में अवतीर्ण हुए थे। परंतु बहुत से पुरुष उन्हें अवतार नहीं मानते। इसके कारण अनेक हो सकते हैं। उन सबका उल्लेख कर अप्रस्तुत आलाप अनावश्यक है। साधारणतः जो वेद शास्त्र पुराण इतिहास को नहीं मानते, उनके लिए तो हमारा कुछ वक्तव्य ही नहीं है। परंतु जो पुरुष पुङ्गव वेद शास्त्र पुराणादि प्राचीन ग्रन्थों की बात सत्य समझते हों उनके लिए इस निवन्ध में ये चार बातें लिखी जाती हैं।

श्री चैतन्य चरितामृत गौरांग देव का समकालीन आर्ष ग्रन्थ माना जाता है, उसमें लिखा है कि:—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

"भागवत भारत शास्त्र आगम पुराण ।
कृष्ण चैतन्य अवतार प्रकट प्रमाण ।"

इस पयार का अर्थ यह है कि भागवत (श्री मद्भागवत) भारत (महाभारत) शास्त्र (वेद) आगम (तंत्र) पुराण (भागवतेतर अन्यान्य अनेक पुराण) आदि ग्रन्थों में श्री कृष्ण चैतन्य के अवतार का वर्णन प्रत्यक्ष रूपसे लिखा है। हम इन्ही पांचों की आलोचना करते हैं।

पहिले श्री मद्भागवत को देखिये –

"छन्नः कलौ यद्भवः स्त्रियुगोऽथ सत्वं"

अर्थात् तुम त्रियुग हो। सत्य त्रेता द्वापर में अवतीर्ण होते हो। अब प्रश्न उठता है, कि "क्या कलियुग में नहीं होते" उत्तर होता है, कि –"छन्नः कलौ" अर्थात् होते हो कलियुग में भी, पर 'छन्नः" (आच्छादित) रहते हो। इसी-लिए कहा "त्रियुग"। 'छन्नः, का अर्थ हुआ छिपे हुए। किससे छिपे हुये? इस प्रश्न का सरल उत्तर है 'माया से'। परंतु भगवान् माया से ढके नहीं रह सकते।

"विलज्ज मानया यस्य स्थातु मीक्षो यथेऽमुया"

माया लज्जा के कारण भगवान् के सामने ठहर नहीं सकती फिर वह उनका आच्छादन कैसे करेगी?

"माया परैत्यभि मुखेच विलज्जमाना"

माया भगवान् के सामने से लज्जा के कारण दूर भाग जाती है। जैसे अन्धकार सूर्य्य के सामने से दूर भाग जाता

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

है, उसी प्रकार चित् सूर्य्य श्री भगवान् के सामने माया (जो तम रूपिणी है) ठहर नहीं सकती, तब उनका आच्छादन कैसे करेगी? यदि कोई कहे कि अंधकारने सूर्य्य को ढक दिया' तो यह युक्ति जैसी असंगत होगी उसी प्रकार 'माया से भगवान् का छन्न कहना भी पागल का प्रलाप कहा जा सकता है। तब यह सन्देह ज्यों का त्यों रह जाता है। वास्तव में भगवान् अपनी शक्ति से ही आछन्न हैं और उसका नाम है "चित् शक्ति"। श्री भागवत् में ही इसका प्रमाण है।

"मायां व्युदस्य चिच्छक्त्या कैवल्ये स्थित आत्मनि"

चित् शक्ति से माया को दूर कर केवल आत्मा में स्थित है। क्योंकि माया है, जड़ शक्ति। चित् शक्ति से ही उसका व्युदास (दूरी करण) होता है। अन्धकार को विनाश करने वाला प्रकाश सूर्य्य की शक्ति है। इसी प्रकार माया को नाश करने वाली 'चित् शक्ति' ही भगवान् की शक्ति है। सूर्य्य अपने प्रकाश से आछन्न है और भगवान् अपनी चित् शक्ति सेढके हैं। उसी शक्ति से भगवान् का आछन्न रूप कलियुग में प्रकाश होता है। श्री रूप गोस्वामी ने लिखा है।

राधाकृष्ण प्रणय विकृतिर्ह्लादिनी शक्ति रस्मा, देकात्मानावपि भुविपुरादेहभेदं गतौ तौ। चैतन्याख्यं प्रकट मधुना तद्वयं चैक्य माप्तं, राधाभावद्युति सुवलितं नौमि कृष्ण स्वरूपम्॥

श्रीकृष्ण की अंतः शक्तियों में चित् शक्ति प्रधान है। चित् शक्ति के तीनरूप हैं। ह्लादिनी, संधिनी, और संवित्। ह्लादिनी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शक्ति का ही नामान्तर है 'राधिका' उसका वर्ण है प्रकाश। वही प्रकाश वर्ण (रंग) में समझाने के लिए 'रुक्मवर्ण' (या कनक वर्ण) कहा जाता है इसीसे ह्लादिनी शक्ति संवृत श्यामसुंदर विग्रह भी पीतवर्ण अथवा गौर वर्ण प्रतीत होता है।

जैसा गौरांग रूप का वर्णन है। 'हरिः पुरट सुंदरः, यह पुरट सुंदर रूप ही वेदमें:

'यदा पश्यः पश्यते रुक्मवर्णम्।'

"हिरण्यश्मश्रुः हिरण्यकेशः आप्रणखात् सर्व एव सुवर्णः"

(छान्दोग्य ३ ६-६)

"ज्योतिरिवा धूमकः"

(कठ-४-१३)

आदि रूप वेदों में वर्णित हैं। श्री भागवत् में भी :—

"आसन् वर्णास्त्रयोह्यस्य गृह्णतोऽनुयुगं तनुः।
शुक्लो रक्त स्तथा पीतः इदानीं कृष्णतां गतः"

गर्ग मुनि नन्दराज से कहते हैं यह तुम्हारा पुत्र प्रतियुग में अवतार ग्रहण करता है शुक्ल, रक्तपीत रूप से, अब कृष्ण हुआ है।

यह समय द्वापर का था। सतयुग में शुक्ल त्रेता में रक्त और द्वापर में कृष्ण है, तब पीतवर्ण कलियुग में हीसिद्ध होता है

एकादश स्कंध में भी कलियुग के उपास्य रूपके प्रकरण में "कृष्ण वर्णं त्विषा कृष्णं" स्पष्ट लिखा है। कृष्ण वर्ण शब्द से जब कृष्ण वर्ण सिद्ध है तब 'त्विषा कृष्ण' शब्द व्यर्थ होता है, सुतरां वहां अकृष्ण पदही है। अकृष्ण का अर्थ 'गौर' ही होता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

काले का प्रति योग शब्द गोराही है । यदि कोई कहे कि 'वह क्या काला है ?' तो यही अर्थ होगा कि गोरा है प्रति योगी शब्द प्रतियोगी शब्द का ही बोधक होता है । जैसे 'यहां क्या अंधेरा है ?'— इस प्रश्न का भावार्थ उजेलेका बोध कराता है । यह कलियुगोपास्य रूपही 'पीत है' जो दशम स्कंध के 'शुक्लो रक्त स्तथा पीतः' से सिद्ध होता है ।

नारायण श्याम, विष्णु श्याम, रामश्याम, वामनश्याम, श्री कृष्ण श्याम, सभीश्याम हैं (केवल गौर ही गौर हैं ।

ह्लादिनी शक्ति से मिलकर श्यामसुंदर श्री कृष्ण ही गौर कनकावदात हिरण्यमय रुक्म वर्ण प्रतीत होते हैं (यह वेद और श्री भागवत् का प्रमाण निरूपण हुआ ।

महाभारत में स्पष्ट है :—

" सुवर्ण वर्णो हेमांगो वरांगश्चंदनां गदी "

इसका उपोद्घलक है, 'सन्यास कृत्समः शांतो' । 'सुवर्ण वर्ण हेमांग' और 'सन्यासकृत' यह सब गौरांग अवतार के स्पष्ट प्रमाण नहीं तो क्या हैं ?

उपनिषद् में एक और भी स्पष्ट नाम मिलता है । "महान्प्रभुर्वै पुरुषः सत्वसैष प्रवर्तकः"

श्वेताश्वतर ३-१२)

अथर्वण वेदका चैतन्योपनिषद् भी प्रत्यक्ष प्रमाण है । इसका वैज्ञानिक सिद्धांतयह है, कि श्री भगवत्तत्व में ज्ञान और आनंद दो प्रधान धर्म हैं । ज्ञान भोक्ता है, और आनंद भोग्य है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्री भगवान् में स्वयं भोक्तृ भोग्यांश हैं। इसी भोक्तृ भोग्यांश के 'ऐक्य' का रूप श्री गौरांग रूप है।

यह जो "एकात्मानावपि भुवि पुरा देह भेदं गतौ तौ" वर्णन है, कि एकात्मा होकर भी देह भेद से राधा कृष्ण दो होगये। इसका उपनिषद् में यों वर्णन है।

"स वै नैवरेमे तस्मादेकाकी न रमते सद्वितीयमैच्छत्। सहै ता वानास। यथा स्त्री पुमांसौ संपरिष्वक्तौ स इम मे वात्मानं द्वेधा पातयत्ततःपतिश्च पत्नीचा भवताम्।"

(वाजसनेयि ब्राह्मणोपनिषद ३-४-३)

वह (ईश्वर) क्रीड़ा नहीं कर सका क्योंकि अकेला कोई भी क्रीड़ा नही करता है, उसने दूसरा चाहा। वह ऐसा था जैसे स्त्री पुरुष संपरिष्वक्त (मिले हुए) होते हैं। उसने अपने इस रूप के दो भाग किये उससे पति और पत्नी होगये।

इस पति पत्नी रूप होने से पहिले एक तत्व था और वह गौरावतार में फिर एक होगया। भगवान् के सब रूप नित्य हैं, और द्वेधा रूप भी नित्य है। संपरिष्वक्त रूप गौरांग रूप है, द्वेधा भूत रूप राधा कृष्ण है।

साधक उपासकों को जैसे राधाकृष्ण रूप स्फुरित होता है, उसी तरह गौरांग रूप भी स्फुरित होता है।

साधक के साधन बल से जो भगवान् का दर्शन होता है, उसे सिद्धि कहते हैं।

कभी कभी अचिन्त्य शक्ति द्वारा श्री भगवान् इस प्राकृत

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जगत् में सांसारिक जीवों के मध्य में भी लीला विलास के लिए प्रकट होते हैं। उसे अवतार कहते हैं जब द्वेधा भूत रूप प्रकट होता है तो लक्ष्मी-नारायण, सीता-राम, राधा-कृष्ण आदि रूप से प्रतीत होता है और जबसंपरिष्वक्त रूप प्रकट होता है तो वही गौरांग रूप से प्रतीत होता है।

यही गौरांग अवतार है, इसी की उपासना संसार—निस्तार का उपाय है।

वेदाहमेतं पुरुषं महान्त मादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।
तमेव विदित्वाऽतिमृत्यु मेति नान्यः पंथा विद्यतेऽयनाय ॥
(श्वेताश्वतर—३-८)

इसमें स्पष्ट है, कि 'तम से पर इस आदित्य वर्ण पुरुष के ज्ञानविना भगवत् प्राप्ति का और पथ नहीं है क्योंकि यह करुणा वतार है'

आल्हादिनी शक्ति का राधा नाम इससे है कि सब जगत् आनन्द कीही आराधना करता है सबका यहीसंकल्प है 'सुखं मे भूयात्' (मुझ को सुख दो।) ज्ञान ही आनंद को भोगता है। वही श्री कृष्ण रूप है। ज्ञानानंद मिलकर अचिंत्यभेदाभेदात्मक श्री गौरांग रूप होता है।

इसी गौरांग रूप का ध्यान तंत्र में इस प्रकार वर्णित है:-

"एवमंग विधिं कृत्वा मंत्रीध्यायेद्यथाच्युतं।
कलाय कुसुमश्यामं द्रुत हेमनिभं तु वा'

यह कलाय कुसुमश्याम श्री कृष्ण हैं और द्रुतहेमनिभ श्री

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गौरांग हैं। एक श्री गोपाल मंत्रमें दो ध्यान का यही प्रयोजन है कि दोनों एकही तत्व हैं, जो विग्रह श्यामसुन्दर है वही आह्लादिनी शक्ति द्योतित होकर गौर सुन्दर प्रतीत होता है, वह ध्यान काय संपुटित श्री गोपाल मंत्र का है। संपुटित, संपरिष्वक्त, संश्लिष्ट संवलित, आवृत और छन्न का प्रायः एक ही भाव है। तत्व कथा यह है कि:

"श्री कृष्ण काही प्रकाश विशेष श्री गौरांग-रूप है"

इति

—※—

इति श्री माध्व गौड़ीय तत्व दिग्दर्शन समाप्तं शुभमस्तु—

अथ अनुराग सुमन

दोहा--जहाँ भक्ति तहँ नेह है जहाँ नेह तहँ प्रेम।
जहाँ प्रेम तहँ हरि रहत लुप्तहोत सब नेम।
प्रीति शून्य उर में कहाँ हरि चरणन अनुराग।
हरि लीला अनुरक्त रहु सब यत्नन कों त्यागि॥

राग बिभास— होत प्रभात न जात सह्यो री। प्रिया प्रीतम आतुर उठि बैठे बिछुरन काल अकाल भयो री। कुंज छाँह प्राचीदिश आई कल रव पक्षिन-निकर सुन्यो री उड़गन दीपक मन्द ज्योति भये खटपद अम्बुज तें निकस्यो री॥ मलिन बदन दीखत कमोदनी पथिकन निज निज मार्ग लयो

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

री । काग सुशब्द मिलन सूचक जो सोयाछण विपरीत लग्यो री ॥ बैरी तमचुर शोर भोरहीं दम्पति हृदय विदीर्ण कर्यो री । दीर्घ स्वास सह त्रास लेत दोउ रस महँ अतुल बिरस प्रकट्यो री । वेला समय अबेला मानत ब्रह्मा हू प्रतिकूल जंच्यो री । चकई बोल बाण सम लागत अरुणोदय रवि हृदय दह्यो री ॥ भैरव राग सुहात न नेकहु दीपक ही सों मन अटक्यो री । दिनकर विजय राज च्युत निशपति छण महँ अप्रिय ठाठ ठयोरी ॥ निकसि कुंज तें चले सशङ्कित मिल बिछुरन क्रिम जात कह्योरी । आगे पग नहिं परत सिथिल तन मुरि मुरि देखत नेह नयोरी । पुर जन त्रास उदास हृदय दोउ कठिन बिरह गृह पंथ गह्योरी । बाँके पिय पुनि मिलन आस सों हृदय माहिं कछु धैर्य्य बँध्योरी ॥ १ ।

राग कालिङ्गड़ा तेरी सौं अब अन्त न जैहौं । तू तो प्राणन हू तें प्यारी तव पद रज शिरमौर बनैहौं । परतिय कपट स्वार्थ बचनन सुनि अबहौं काहुय नहिं पतियैहौं । घेर लेत सब आय मार्ग महँ अब हौं जन तिनके गृह रहिहौं ॥ करत चवाउ तिहारो सब मिलि सो अनरीते बचन न सहहौं । काहू ओर न देखौं हित सों तेरो साँचो प्रीति दुरैहौं ॥ हृदय निकुंज दृगन की शय्या तापैं तोहिं सप्रेम पधरैहौं । मृदु मुस्क्यान ब्याज हित प्यारी तेरे कोमल चरण दबैहौं ॥ सरल सुभाव बिहँसि श्री राधे कहत पिया अब जन अनखैहौं । बचन बनाय भोर लइ भामिनि बाँके पिय प्यारी यश गैहैं ॥ २ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तू गोरी गोरी ! मैं कारो । तेरे हो बदन प्रकाश प्रकाशत मो उर बदन केर अँधियारो ॥ तेरे कजरारे नयनन तिल हौं सोइ अटल हृदय बिच धारयो ताको यह प्रतिबिम्ब श्याम तन बाँके पिय पुतरिन को तारो ॥ ३ ।

चोज मनोज सनी रस बतियाँ ॥ करत श्याय श्यामा प्रमुदित मन सुन्दर मृदुल रँगीली रतियाँ । मदन मनोरथ युगुल भाव युत क्रोड़त नित करि करि रस घतियाँ नव मंजरि गण रंध्रन झांकत बाँके पिया जुड़ावत छतियाँ ॥ ४ ॥

कैसे श्याम रंग यह पायो बस रहे हिय तिय दृग कजरारे तिन यह रंग सुढंग चढ़ायो । कै राधे कारी लट नागिनि भेंटत गरल प्रभाव दिखायो । कुंज मिलन परकीय भाव निश कारो वेष सुदेश रचायो । उज्ज्वल प्रेम गौर बपु प्रिया पुनि परसत निज अधिकार जमायो । कृष्ण रूप बांके पिय तजिकैं शची सुवन गौरांग कहायो । ५ ॥

दीखत लाल नयन अरुणारे ॥ पर तिय अधर बिम्बरस अँचयो धौंकहुं विशिष मदन नृप मारे ॥ बस रहि प्रिया पव तल अरुणाई देत जो जावक समय निहारे बाँके पिय जागे निश भर कहुँ रस बश दृग-पुट रहे उघारे ॥ ६

श्याम बदन केसरया चन्दन ॥ विरच्यो कोउ युवती कर पल्लव शोभा अमित बीच बिच वन्दन ॥ सो छवि अवलोकत नवनागरि परी कटाक्ष जाल के फन्दन ॥ बांके पिय मन गति विथकित भई रतिपति-पति राखी नँदनन्दन ॥ ७ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

घुंघरी अलकावलि मुख कैसी ॥ दोहुन दिश विष रहित भुअंगनि सुधा कुराड तट जुरि रहिं जैसी ॥ वदन कमल रस लेन चलींधौं अलि श्रेणी छवि लागत तैसी । बाँके पिय पट तर न बनत कछु श्याम वदन छवि बनी अनैसी ॥ ८ ॥

होरी

राग काफ़ी-चलरी चल बन्शी वट पैं नट नागर खेलत होरी । कित बैठी इत मौन धरेंरी तू वृषभानु किशोरी ॥ एकनकी सारी रँग बोरत मुख में मलत गुलाल । एकन की वहियां पकरत री मुख जोहत नव बाल ॥ काहू की वेसर सुरझावत उरझ रही बनमाल । लै आँचर काहूके द्दगसों काढ़त अविर गुलाल ॥ काहू सों हँसि करत ठिठोली कंचुकि बंधन खोलि । काहू के भुज भरि अंकम गहि परसत लोल कपोल ॥ काहू के उरोज तकि मारत केसर रँग पिचकार । खेलत या विधि घोष नारि सँग रसिया नन्द कुमार ॥ बाज रहे दफ गहगहे री झाँझ पखाउज बीण । मधुर ध्वनि मुरली गति नृतत मोहन सुघर प्रवीण । चाउ भरीं होरी खेलत सब नवल वधूटी बाल । बाँके पिय तो बिन रँग फीका मानत मदन गुपाल ॥ ६ ॥

चाउ भरी गोरी अलबेली खेलन आई होरी ॥ नव अनुराग गुलाल द्दगन भरि रस रँग हृदय कमोरी ॥ बीच मिल्यो मोहन नटनागर वृन्दाबनकी खोरी । कोर कटाक्ष छोरि पिचकारी डारी प्रेम डगौरी ॥ कहा नाम काकी तू बेटी कित आई इत ओरी । भूली गैल इतैं ह्वै निकसी हौं वृषभानु किशोरी ॥ मुक्तन हार

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गरें को टूट्यो करत दोऊ झकझोरी। निरखि परस्पर नव नघ बानिक दोउन मन उरझोरी॥ नयन सैन कछु भाव जनायो चले कुंज की ओरी। सरस गुलाल युगुल मुख मेलत बाँह पकरि बरजोरी॥ नयो नेह नव रस मदमाते नवल किशोर किशोरी। विलसत नवल भांति बाँके पिय नई रँगोली जोरी॥ १ ॥

धीमाताल—व्रजराज सांवरे तेरो गुमान निकारौं॥ तौ बेटी वृषभानु राय की नख शिख सौं तोहि काढ़ौं॥ डगर बगर ब्रजनारिन रोकत सो उत्पात निवारौं। सूधो करौं ढीठ छैला कौं अब निज गुणन सम्हारौं॥ भृकुटी धनुष चढ़ाय मैन शर नयनन सौं संधानौं। बाँके पिया अलक विच बांधौं रूप ठगौरी डारौं॥ ११॥

बाल कृष्ण नव बाल वंचि बाल रूप धारयो। अब काहे दुरि लीनो मात-गोद को सहारो॥ काल्ह घूंघट में मारी पिचकारी दीनी गारी। आज दीखत है भोरो भोरो बदन तिहारो॥ केसे सूधे से लगत दूध मुख तें चुअत। काहे निकसै न छैल प्राण जीवन हमारो॥ बाँके पिया तव हेतु सैतं राख्यो है सचेत। बरसाने की खिरक माहिं गोधन को गारो॥ १२॥

आज गई री वीर गोकुल की डगर। तहँ मिल्यो अचानक श्याम सुघर॥ ग्वाल बालन कौं टेरि मोहिं लीनो घेर। मिल सबन भिजोई डारि रँग की गगर॥ लये परस कपोल मेरो

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

घूंघट खोलि । मुख मल्यो गुलाल ढीठ नन्द को लँगर ॥ बांके पिय गुरजन धरे नाम गनि गनि । आई भवन जबहिं कछु लाय के गहर । १३ ॥

फुटकर पद

कर्म सँघाती जन्म जन्मके ॥ जासों श्याम प्रीति शर लागत पार होत उर कुलिश वर्म के ॥ प्रेम भये नहिं नेम रहत पुनि छूटत वन्धनकर्म धर्म के ॥ बाँके पिया रसिक जन जानैं जे ज्ञाता या नेह मर्म के ॥ १४ ॥

विरह अग्नि शीतल अति भाई ॥ जाकें लगे जुड़ावत छाती प्रिया प्रीतम दृढ़ सुरत वँधाई ॥ सुख समाप्त ह्वै जात मिलन महँ तासों कही विरह प्रभुताई । बाँके पिया सूर विरही जन नेह पीर जिन हृदय दुराई ॥ १५ ॥

विनय

हौं अति मूढ़ कहा धौं मांगौं ॥ जो चाहौ सो देहु कृपा करि युगुल रास रस महँ अनुरागौं ॥ तव विमुखन अभक्त दुर्जनको करि प्रणाम दूर ते त्यागौं ॥ तव स्वरूप स्मरण निरन्तर हृदय रहै सोवौं कै जागौं । श्रीवन कुंज कुंज जब डोलौ रज ह्वै तव पद कमलन लागौं । बांकेपिय प्रभु तेरोइ ह्वै के तव गुण चरित प्रेम रस पागौं ॥ १६ ॥

श्रीराधा रमण यही मोहिं दीजै ॥ काम क्रोध मद लोभ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मोह रिपु तिनसों मेरी रक्षा कीजै ॥ तव चरणन में चित्त रहै नित तेरेहि प्रेम रंग तन भीजै। बांकेपिया भलो कै अनभल या कौं चरण शरण में लीजै ॥ १७ ॥

उत्कण्ठा।

रसिकन चरण धूलि जो पाऊं ॥ सहित भाव अनुराग मुदितमन शिरस धारि प्रति अंग लगाऊं। रसिकन पाछे नित प्रति डोलौं हरिलीला यश तिन सँग गाऊं। बांकेपिय पुनि पुनि यह मांगौं रसिकन की अनुचरी कहाऊं। १८ ॥

राग सारंग—मेंहदी देत हियो हुलसायो ॥ लालन प्रिया-पद कमल बिलोकत जानि रेख निज भाग्य सराह्यो ॥ उर संकोच, हरष, भय उपज्यो मेंहदी दै जब चरण छिपायो। झांपन पद, शोभा सुमनोरग, लागि चरण नहिं जात छुरायो ॥ मेंहदी भाग्य प्रशंसत पुनि पुनि आत्म निवेदन भाव लखायो। कष्ट सह्यो नव हरित अंग दै अरुण रंग सेवा दर्शायो ॥ दरकत हृदय निवारत मेंहदी सैनन सखी उपाय बतायो। गुदगुदात लालन अंगुरी सों विहँसन मृदुल व्याज भरि पायो ॥ मेंहदी बीरन की गति पाई मदन कुसुम शार हृदय दुरायो। अन्त समय प्यारो पद परसत बांके पिय दुर्लभ पद पायो ॥ १९ ॥

मेंहदी रचत प्रिया कर कमलन ॥ कर पङ्करत रोमा वलि ठाढ़ी फूलि रह्यो धौं छबि-नन्दन बन ॥ रबि, शशि, विशिष, तुला, गज, गो, धनु, मीन, सरोज, कोष, ध्वज, बाहन। सूठी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

माहिं विश्व की रचना धरी दुराय सु विश्व विमोहन ॥ सित पदार्थ सों असित नाम निज अङ्कित कीनो गुप्त श्याम घन। आग्रह करि जब सखिन निवारी प्रीतम नाम विलोकत छण छण। रचि रचि रचित लाल कर मेंहदी परम प्रीति सब करत प्रशंसन बांके पिय बाढ़ी रति इत उत देत परस्पर दोउ आलिंगन ॥ २० ॥

प्यारी छवि पिय ठड़े निहारत ॥ द्वै नयनन कर तृप्ति न मानत प्रति भूषण मणि बहु वपु धारत । कैसी सुघर बनो प्रिया-शोभा इक टक निरषत निमि-प्रण टारत। बांके पिय मन्मथ के मन्मथ सोलै राई लोन उतारत ॥ २१ ॥

प्रिया प्रीतम दृग होड़ परी ॥ चार चकोर चन्द द्वै रीझे लरत बान काहू न टरी । बरछी, शायक, सांग, कटारी बाँधे दोउ दिश सान चढ़ी। चारहु भट रस शोणित भीजे काहू हारि न पृष्ठ धरी। लज्जा शील गुणन को छांड्यो अभिरत नेकु न कान करी। निमिष न टरत खेत रण चढ़िके करत परस्पर सम्बरी ॥ वरुनि-बार बाँके पिय लेखनि काजर मसि बहुतै निखरी। संधो प्रेम पत्र लिख राख्यो रस तरवर को वेल फरी ॥ २२ ॥

राग देश निरखौं कृष्ण छवि केहि भाय ॥ बिना देखे मदन मोहन विरह व्यापै आय । वदन पूर्ण मयंक छवि जेहि निरख मदन लजाय। देखि सो उर प्रेम वारिध सरस जल उमगाय ॥ अधर मुरली धरे प्रीतम निरखि हिय हुलसाय ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मदन आनँद दाउ बैरी हेत ओट लगाय ॥ दृष्टि आलिंगन करन सखि निकसि दौरी जाय । प्रेम अश्रु प्रवाह बाढ़ै दृगन सलिल बहाय ॥ रोम पुल्कित प्रेम सों नहिं गिरा कण्ठ समाय । चित्त स्वस्थिर रहत नहिं सखि व्यथित कछु न बसाय ॥ ग्वालिनी मन मत्त गज कुल कान अंकुश खाय । बाँके पिय सों नाहिं मानै चलत फन्द तुराय ॥ २३ ॥

कहौ हरि कैसें बीती रात ॥ गात मलिन दृग सजल दीखियत मुख सों कढ़त न बात ॥ भटकत फिरे सघन कुंजन धौं दूती के उत्पात । जान न पाये भवन माहिं कै तहाँ चली नहिं एकहु घात ॥ करयो निरादर कै कोउ युवती वचन बाण सों बींध्यो गात । सरल सुभाव प्रिया सों कैधों कपट करयो तातें पछितात कठिन मान प्रिया नाहिं सिरानों श्रमित भए निश सौहैं खात । काम न सरयो कछुक बाँकेपिय रीतेइ आये होत प्रभात ॥ २४ ॥

रस को मरम रसिक ही जानें ॥ रसनिधि कृष्ण-प्रेम की मूरति श्रीराधे कों उर महँ आनें प्रेम भरे डालें बाँकेपिय रस अवगाहन बिधि पहिचानैं । गोपी भाव रहत उर अन्तर युगुल चरित्र सरस मन मानैं ॥ २५ ॥

कहौ कोउ कृष्ण कथा दिनरात ॥ मृदुल सरस अनुराग बढ़ावत सुनि सुनि हरि यश हियो सिरात । प्रेमी रसिक अनन्य भक्त कों विन हरि कथा न इक छण जात । कहत सुनत नित हरि की लीला कृष्ण राधिका रूप लखात ॥ धन्य धन्य वक्ता

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अरु श्रोता धन्य धन्य तिनके पितु मात । कोटि श्रवण रसना नहिं पाये सुमिर सुमिर पुनि पुनि पछितात । जाके सुने प्रेम जल उमगै कंठ अवरोधै पुलकित गात । बांकेपिया मनोहर रस मय लीला मदनगोपाल सुहात ॥ २६ ॥

कबहूँ हौं श्री बन द्रुमबेली ॥ श्यामा श्याम चरण रज परसत सुख पैहौं त्रैताप सकेली ॥ क्रीड़ा करिहैं जब निकुंज महँ नवलपिया सहनारि नवेलो । दोहुन कर निवारिहैं मोकों मूढ़ चढ़ी जड़ गर्व गहेली ॥ भूर भाग जानौं बांकेपिय पाय सुअवसर ठौर अकेली । दम्पति नवल प्रेम रस पागे मम पट ओट करैं रसकेलो ॥ २७ ॥

राग विहाग—देहु कोउ कृष्ण प्रेम धन मोहिं ॥ जाधन कों हौं सदा भिखारी दीन भाव जाँचत हौं तोहिं । सो धन बिन जीवन दारिद्री वृथा देह प्राणेंद्री होंहिं । बांकेपिय हे प्राण बंधु जन प्रेम बिरह मेरे दृग रोहिं ॥ २८ ॥

रागदेव गंधार दादरा

कबलौं व्रज तें न्यारो रैहौं । बिरह व्यथा तन छीण करत नित केतेदिन अन्तर दुख सैहौं ॥ श्यामा श्याम बिहार रासरस आस्वादन करि कब सुख पैहौं । यमुनाकूल निकुंज द्वार पर बांकेपिय कब कुटी बनैहौं ॥ २९ ॥

ह्वैहौं कब कोकिल व्रज बन की ॥ निरखौं निशि दिन प्रिया प्रीतम छबि तड़िध लता सुन्दर नव घन की ॥ श्यामा श्याम

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चित्त आकर्षौं मृदु स्वर बोलि ओट वृक्षन की। बांकेपिया कदम्ब डारि पर बसौं नित्य आशा यह मन की ॥ ३० ॥

राखौ मोहिं ब्रज महँ मुरला करि ॥ मोर कुटी पर टेरि बुलाऊं नृत्य करौं सँग श्याम रसिक वर ॥ श्याम घटा लखि मोद बढ़ाऊं बोलि बोलि मुख शब्द मनोहर। बांकेपिय श्रृंगार बनाऊं पिच्छ चन्द्रिका युगुल शीश धरि ३· ॥

कब ह्वै हौं वृन्दाबन को रज ॥ प्रिया पीतम पद कमल लागिहौं जाको तरसत शिव, ब्रह्मा, अज ॥ युगुल चरण तें अङ्कित ह्वै हौं निरखत रैहौं नित नव लज धज। बांकेपिय हौं कोटि कल्प लौं अन्त न जाउं कहूं ब्रजभ्रन तज ॥ ३२ ॥

दरश दे मन मोहन नँदलाल विरह दुख कठिन सह्यो नहिं जाय ॥ विरह अनल दिन रैन जरावै—शरद रैन मन नेकु न भावै - शीतल पवन दाह उपजावै—तो बिन कछु न सुहाय ॥ दरशदे ॥ राखे नयन-कपाट उघारे - चोखे दृष्टि-पाँवड़े डारे— लेहौं मन आगे करि प्यारे! प्रेम नीर छिरकाय ॥ दरश दे ॥ मन निकुंज में सेज बिछाई—हृदय अष्टदल कमल सजाई—प्रेम अनुराग सुगंध सिचाई—पौढ़ो तापै आय ॥ दरश दे ॥ चौपर हृदय सप्रीति विछाऊँ—नेह लगनकी गोट फिराऊं—पांसा अविचल प्रेम चलाऊं—बाजी प्राण लगाय ॥ दरश दे ॥ चुनि चुनि पुष्प सिंगार बनाऊं—पट आभूषण अंग धराऊं—आत्म समर्पण करि बलजाऊ—बांके पिय उर लाय ॥ दरश दे ॥ ३३ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

खेमटा सांवरे मोरी भर दे गगरिया ॥ पनिहारिन की भीर घनी है । पनघट की सांकरी डगरया ॥ बहुत बेर भई सास रिसै है । दिवस मुँद्यो है दूर नगरया ॥ बाँके पिया मोहन नागर सों । नव गोरी की लागी नजरया ॥ ३४ ॥

साँवरे नेकु बन्शी बजाए जा ॥ तेरी बन्शी ने सब ब्रज मोह्यो । मधुरे स्वर इक तान सुनाएजा ॥ बन्शी वारे नन्द दुलारे । सुघर अनोखी छवि दिखाए जा । बांकेपिय मनमोहन नागर नयनन सैनन रस बरसाए जा ॥ ३५ ॥

राग बिहाग ।

देहु मोहिं कृष्ण नाम रस प्रेम ॥ कृष्ण प्रेम अलिंगन ऐसो जिम जम्बू नद हेम ॥ बिरह माहिं जीवन दुर्लभ है मिलन माहिं बहु क्षेम । बांकेपिय बारत तन मन निज प्राण कीट को नेम ॥ ३५ ॥ नाहिं मो में बिमल प्रेम की गंध ॥ कुटिल प्रेम तें पूर रह्यो मन विषय बासना अंध ॥ राग अरु द्वेष कण्ठ महँ गेरत पाश मोक्ष अरु बन्ध । बाँकेपिय क्रन्दन करि मागौं कृष्ण-प्रेम की संधि । ३६ ॥

चित दै सुनहु जगत के सज्जन ॥ हौं अति पामर, पतित, कृतघ्नी तव चरणन—रज मोर परम धन ॥ ममकृत् जो कुछ है अरु ह्वै है सो सब तव प्रसाद को इक कण ॥ शुक सम पाठ करौं तव बश ह्वै कहिवावौ जो कछु उदार मन ॥ इतनो अघश चहौं हित चितसौं बसबो देहु पुलिन वृन्दावन । राधे गोबिंद राधे माधव रटत रहौं बांकेपिय प्रतिछण ॥ ३७ ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्री चैतन्य महा प्रभु प्रति—भलेहीं डारौ रौरव माहिं गौरवपु देखौं काशो नाहिं ॥ है असीम जिमि पातक मेरो तैसोइ करुण स्वभाव है तेरो । गौर रूप धन प्राणन केरो बसिरह्यो नयनन माहिं ॥ भलेहीं ॥ आनि जो हौय मधाई के सम ताको पातक धरौ शीश मम । निस्तारौ प्रभु सां जीवाधम राखि चरण की छाँह । भैलें हीं ॥ सुजन साधु जेते जग होईं निज सुकीर्ति यश प्रभु कों देहीं । पातक छोरि आनि कछु नाहीं बांकेपिय के पाहिं ॥ भलें हीं ॥ ३८ ॥

नाम संकीर्तन ।

प्रभाती - सुरमुनि दुर्लभ राधे बल्लभ भुवन चतुरदश बन्दन ॥ काली मर्द्दन कंस निकन्दन गोपी जन मन रंजन । कृष्ण मुरारी कुंजविहारी रास रसिक नँदनन्दन । वृन्दाबन नायक जन सुखदायक श्री राधे दग अंजन ॥ बंशोबट कालिन्दी के तट ब्रज युवतिन सुख वर्द्धन । यदुनन्दन सुरपति मद गंजन नष पर धरि गोवर्द्धन ॥ मन्मथ—मन्मथ विशद प्रमपथ दर्शायो वृन्दाबन । बाँकेपिय सोइ धारि गौर बपु प्रकटे प्रभु श्री चैतन्य ॥ ३९ ।

इति अनुराग सुमन समाप्तं—

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सवैया – सम्वत् विक्रम उन्निस सौ महँ अस्सी तीन जो और मिलावहु। पुनि चैतन्यअवतार को साल सो चारसौ चालिस एक गनावहु। "माध्व गौड़ीय तत्व दिग्दर्शन" पुस्तक को शुभ नाम बतावहु। श्री चित्र गुप्त के वंश में उद्भव बाँकेपिया - कृत् ताहि सुनावहु॥

दोहा—बाँकेपिया सरस्वती, सहित बचन अनुकूल।
सेवौं युगुल निकुंज महँ, श्रीवन यमुना कूल॥

इति श्री माध्व गौड़ीय तव दिग्दर्शन संपूर्ण शुभ मस्तु

विज्ञापन—इस पुस्तक को हर एक मनुष्य शुद्ध छपवा कर लाभ उठा सकता है—

बांके बिहारी लाल,
निदानमहल रोड लखनऊ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सवैया

रे मन मूरख त्यागि प्रपंच, श्री गौर किशोर भजै कस नाहीं।
खोजत प्रेमानन्द इतै उत, खोय रह्यो निज आयु वृथा हीं।
श्रीराधा औ कृष्ण-स्वरूप सुधा रस, पान की चाह जो है हियमाहीं।
आनंद प्रेम हैं संपरिष्वक्त, सो बांकेपिया भजु गौर सदाहीं॥

ग़ज़ल

कृपालु राधा रमण रसिक वर, रमण करौ इस हृदय में आकर।
करौ इसे अपना केलि स्थल, ये काम क्रोधादि सब हटा कर॥
न प्रेम, अनुराग, भाव भक्ती, न मुझ में सेवा भजन की शक्ती।
चरण कमल से बनादो कोमल, कठोरता चित्त की मिटाकर॥
तड़फ रहा है चकोर सा मन, मिलेंगे कब चंद्र मुख के दर्शन।
हरौ बिरहताप आके स्वामी, वो प्यारी प्यारी सी छबि दिखाकर॥
युगल महाभाव उर में राखौं, मधुर वो रस रास नित्य चाखौं।
रहौं निकट आप ही के स्वामी, निकुंज बन में कुटी बनाकर॥
तुम्हारे चरणों का है सहारा, है दास बांकेपिया तुम्हारा।
मनुष्य-जीवन सफल हो सारा, तुम्हारी लीला चरित्र गाकर॥

इति

आम्नाय-मन्त्रालय
ग्रन्थनिधि ... संख्या
बाराबंकी-५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उद्बोधन ।

मुझमें यह सामर्थ्य कहाँ थी कि ऐसे गम्भीर कठिन तत्वों, जटिल और गूढ़ विषयों पर लेखनी उठाने का साहस कर सकता किन्तु सागर की यात्रा के लिये जलयान ही का एक मात्र सहारा होता है इसी प्रकार यदि मुझको आश्रय था तो केवल श्री पूज्यपाद गुरुदेव श्री मधुसूदन गोस्वामी के चरण कमलों एवं भगवद्भक्तों की कृपा और प्रेम प्रताप का जिसका प्रकट प्रभाव सर्व शक्तिमान पर तत्व परमात्मा श्री राधा रमण की असीम कृपा है जिसने मुझ पामर को भी अपने कर्तव्य पालन की शक्ति प्रदान की, यद्यपि इस ग्रन्थ में जिन भावों का विवेचन, विरचन और संकलन है वह महानुभावों महान् पुरुषों के विवर्णित वाक्यों का सार मात्र है जो मुझ बुधि हीन की हार्दिक संकीर्ण कुंज गलियों में परिवर्तित होकर आपके समक्ष अल्प भेंट रूप में उपस्थित है तथापि समस्त सज्जनों की सेवा में सविनय निवेदन है कि जो त्रुटि व न्यूनता इस में पाई जाय उसको हितपूर्वक अबोध निवेदक को अनुग्रहीत करने के अर्थ दया दृष्टिपात कर सुधारने की कृपा दर्शावें ।

श्लोक— सदा सदाचारपरास्तुये नरा भवंति दामोदर भक्त्य पत्तया तदीय पादाम्बुज-धूलि धूसरं कदा भवेदस्य शिराऽधमस्यमे ॥

विनीत
बाँके विहारी लाल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनुमति ।

पाश्चात्य शिक्षा, रहन सहन के अनुकरण और संग के प्रभाव से आधुनिक सन्तान के विचार शैली की प्रगति का प्रवाह कुछ उलटा ही बह रहा है जिस ओर देखिये उस ओर अपने मत से घृणा, अपनी आर्यर्षि प्रणीत पुस्तकों में अविश्वास और अपनी पुराचीन शैली प्रति आक्षेप, शंका और तर्क वितर्क दीख पड़ रहा है विचार करने से ज्ञात होगा कि इन सन्तानों की प्राथमिक शिक्षा संस्कृत व देवनागरी भाषा न होने से ही यह सब दुर्वासनाएं फैल रही हैं-यद्यपि जो वर्तमान उन्नति पाश्चात्य देशों में हुई और होती जाती है और जो हमारे ही यहां से ली हुई है वह सब पार्थिविक होने से इहलौकिक उन्नति है इससे पारलौकिक उन्नति कदापि नहीं हो सकती कारण कि पाश्चात्य विद्वान मनुष्य जीवनका ध्येय केवल इहलोक के सुख और धनोपार्जन कोही समझते हैं वे पुनर्जन्म न मानने से कर्मानुसार जन्म नहीं मानते यद्यपि अब वहां के बहुत से विद्वान भी अपनी भूल स्वीकार करते जारहे हैं और पारलौकिक ज्ञान के अनुसंधान में लग रहे हैं भारत का विज्ञान बताता है कि यहां की पार्थिविक उन्नति भी आध्यात्म को लिये हुए है और हमारा लक्ष सदा से आत्मोन्नति की ओर रहा है एवं मनुष्य जीवन का ध्येय केवल आत्मोन्नति पर ही निर्भर रक्खा गया है जिसके सन्मुख इहलौकिक सुख तुच्छ और निन्दनीय समझा गया है और बाह्य ज्ञान को लिये हुए जप, तप अहिंसा, दान इत्यादि द्वारा ही मन शुद्ध होकर आत्मोन्नति हो सकती है जिस को आधुनिक सन्तान अपनी पुस्तकों को न पढ़ कर, उनके तत्व को न समझ कर और विद्वानों का सतसंग न करके उस पाश्चात्य भ्रमजाल में पड़ने से अपना विनाश, आगे की सन्तान की अवनति और मनुष्य

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जीवन को बिफल बना रहे हैं अतएव हमारा कर्तव्य है कि अपनी सन्तानों को संस्कृत वा नागरी भाषा के साथ साथ ही अन्य भाषा की शिक्षा दिलाने में कटिबद्ध रहा करें जिससे वे मत भ्रष्ट न होने पावें—

बांकेबिहारी लाल

ग़ज़ल

ऐ दिल तुझी पः अपने सुधरने का भार है।
कर शुद्ध प्रेम कृष्ण से यदि कुछ विचार है॥
हैं भाव शान्त, दास्य, सखा वात्सल्य, कान्त्य।
इन सब में भाव कान्ता भक्ती ही सार है॥
इक एक से हैं दूसरे में गुण बढ़े हुए।
पर भाव कान्ता में सभी का प्रचार है॥
है कान्ता ही प्रेम को कहते विशुद्ध प्रेम।
यह गोपियों के प्रेम का सागर अपार॥
कहते इसी को आत्म निवेदन विचार वान।
माधुर्य्य प्रेम रस में इसी का प्रसार है॥
आनन्द, प्रेम रूप हैं श्रीकृष्ण, राधिका।
श्री गौरचन्द्र रूप ही जिनका विहार है।
बाँकेपिया जो तत्व है गुरुदेव ने कहा।
छेदन को मोह—वृक्ष ये भारी कुठार है॥

इति

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शुद्धाशुद्धपत्र ।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	७	गरु	गुरु
७	१६	गोपाल-नाथदास	गोपीनाथ दास
८	१	गोवामी	गोस्वामी
८	६	भोक्तं	मोक्तं
१६	१६	ब्चन	वचन
२१	१५	उल्ल्ंघन	उल्लंघन
२४	१४	यद्रुपं	यद्रूपं
२५	१	"	"
२७	२०	अतर्यामी	अंतर्यामी
२९	६	श्रीगुरुजी	श्रीरुद्रजी
३०	१२	रूषी	रूपी
३०	१७	पुरा	पुरो
४८	६	त्रिशेषण	विशेषण
५९	३	ब्रह्य	ब्रह्म
६१	६	भूतान	भूतानां

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध
६१	१३	सुंदरसू
६१	१८	भाग्यं
६५	२२	अन्नमयकोष
७२	१६	तेवे
७७	८	मच्छ्हां
८३	११	तीरेपु
८३	१४	मर्मी
८७	२२	पारमर्थिक
८८	१	"
८८	६	हडात्
८८	१२	जीव्रि
८९	२०	दूसरे
९१	२२	उद्धत
९९	२	अपांशुय
१०५	२१	वालशिल्य
१२७	२५	द्रुम
"	२१	तड्विध

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आम्नाय
भरतनिधि, क

Dr..Urmila Sharma Collection, Varanasi